साहित्य-सोपान

प्रथम भाग

वर्नाक्यूलर स्कूलों की पाँचवीं कक्षा के लिए

सम्पादक
पं० दयाशंकर दुबे, एम० ए०, एलएल० बी०
अध्यापक, प्रयाग विश्वविद्यालय
तथा
पं० गङ्गानारायण द्विवेदी
अध्यापक, कान्यकुब्ज इंटरमिडियट कालेज
लखनऊ

प्रकाशक
रामनारायण लाल
पब्लिशर और बुकसेलर
इलाहाबाद

षष्ठवार ३,०००]   १९३३   [मूल्य ।=)

प्रथम भाग

—:०:—

विषय-सूची

प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तकों के संकलन में, शिक्षा-विभाग-द्वारा निर्धारित ाठ्य-क्रम पर विशेष ध्यान दिया गया है। भाषा और विषय ी सरलता तथा क्लिष्टता का ध्यान रख कर ही पाठों का क्रम नेश्चित किया गया है। ऐसे पाठों का चुनाव किया गया है जो वेद्यार्थियों की नैतिक, मानसिक और शारीरिक शक्तियों का वेकास करते हुए उनमें साहित्यामृत पान की अभिरुचि और गगन उत्पन्न कर दें। शुष्क विषयों के पाठ भी ऐसी मनोरञ्जक ाषा में दिये गये हैं कि विद्यार्थी उन्हें चाव से पढ़ कर विषय के ान को हृदयङ्गम कर लें।

हिन्दी-संसार में जो कवि तथा लेखक अपनी अपनी ाषा-शैली के आचार्य माने जाते हैं, तथा जिनकी कृतियाँ हिन्दी-ाहित्य के इतिहास में एक खास देदीप्यमान अध्याय हैं, उन ब कवियों की कृतियाँ यथासाध्य इन पुस्तकों में देने की चेष्टा ी गई है। ये नमूने ऐसे हैं, कि जिनको पढ़ कर विद्यार्थियों के ृदय में उन महाकवियों और सिद्धहस्त लेखकों के ग्रंथों के ढ़ने की अभिरुचि स्वतः उत्पन्न होगी। विषय की उपयोगिता, था विद्यार्थियों का आगामी जीवन आधुनिक साहित्य से ही धिक सम्बन्धित रहता है, इस विचार को ध्यान में रख कर वीन कवि और लेखकों की कृतियाँ भी इस संग्रह में सन्निवेशित ी गई हैं।

प्रत्येक पाठ के अन्त में थोड़े थोड़े 'अभ्यास' ऐसे दिये गए ; कि यदि विद्यार्थीगण मनोयोगपूर्वक इन अभ्यासों को करेंगे

तो पाठ का आशय समझने के अतिरिक्त उनमें प्रबन्ध रचना, व्याकरण के प्रयोग और शब्दों की व्युत्पत्ति तथा उनके मूल रूप ज्ञात करने की शक्ति की वृद्धि अवश्य होगी।

प्रत्येक पुस्तक के अन्त में दो दो परिशिष्ट दिये गये है, जिनमें से एक तो "पाठ सहायक बातों" का है, जिसमें पाठों में आये हुए कठिन शब्दों के अर्थ, व्युत्पत्ति, कहावतों तथा मुहावरों के भावार्थ और अन्तर्कथायें आदि पाठसहायक बातों का समावेश है जिनकी सहायता से विद्यार्थी क्लिष्ट पाठों के समझने में पूर्ण समर्थ होंगे।

दूसरे परिशिष्ट में उन कवियों तथा लेखकों के संक्षिप्त परिचय हैं जिनकी कृतियाँ इन पुस्तकों में दी गई हैं।

किन्तु इन सब विशेषताओं और परिश्रम का फल तभी सफल हो सकता है जब कि हमारे अध्यापकबन्धु भी अपना कर्तव्य उत्साह और लगन के साथ सम्पादन करें। इसी उद्देश्य को लक्ष्य में रख कर हम साहित्य-शिक्षा के कुछ मोटे मोटे नियम नीचे लिखते हैं कि जो साहित्य-शिक्षा देने में उनकी यथेष्ट सहायता अवश्य करेंगे।

(१) अध्यापकों के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह जिस विषय का ज्ञानामृत सरल और सुकुमार बच्चों को पिलाना चाहते हैं, पहले वह स्वयम् उसको पीकर मस्त हो जावें; तब विद्यार्थियों को भी उसी प्रकार मस्त बनाने की चेष्टा करें, अर्थात् जो पाठ विद्यार्थियों को पढ़ाना है, उसकी बारीकियाँ, उसकी विशेषतायें पहले स्वयम् विचार लें और यह भी सोच लें कि इन बारीकियों और विशेषताओं को हम विद्यार्थियों के कोमल हृदय-पटल पर किस प्रकार अंकित करेंगे, तब पाठ पढ़ाना आरम्भ करें।

(२) पाठ आरम्भ करने के पूर्व पाठ की 'भूमिका' (अर्थात् वह वाह्यज्ञान जिसकी सहायता पा जाने से विद्यार्थियों को पाठ के समझने में सरलता हो) विद्यार्थियों को अवश्य बतला देना चाहिये।

(३) पाठ को इतना मनोरञ्जक बना लेना चाहिए कि विद्यार्थियों का ध्यान पाठ की ओर उसी प्रकार आकृष्ट रहे जैसे मक्खी का मिठाई में अथवा बक का मछली में।

(४) पाठ का समय उतना ही रखना चाहिये कि जितनी देर विद्यार्थी अपना ध्यान सम्यक् रीति से पाठ की ओर लगा सकें।

(५) पाठ पढ़ाते समय "पठन-शैली" (पढ़ने का ढंग) पर विशेष ध्यान रखना आवश्यक है, क्योंकि फटी मृदंग या ढोलक तथा टूटे हुए तारों वाली वीणा का स्वर किसी के कानों को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकता, तथा ऐसा स्वर हृदय को भी प्रभावित नहीं कर सकता है। इसी प्रकार अनियमित रूप से पढ़ने का प्रभाव न तो पढ़ने वाले पर होता है और न सुनने वाले पर। इसलिये अध्यापक को पहले स्वयम् स्वर, विराम आदि का ध्यान रख कर प्रभावोत्पादक रीति से पढ़ाने का अभ्यास करना चाहिए; फिर उसी प्रकार विद्यार्थियों से पढ़ने का प्रयत्न करना चाहिये। ऐसा करने से अध्यापक और विद्यार्थी पाठों के समझाने और समझने में आशातीत लाभ प्राप्त करेंगे।

(६) एक बार नियम पूर्वक पढ़ा लेने के बाद फिर शब्दार्थ, मुहावरे और कहावतों के समझाने का प्रयत्न करना चाहिए, यह बातें व्युत्पत्ति और उदाहरणों के द्वारा विद्यार्थियों की समझ में शीघ्र आ जाती हैं।

(७) पाठ्य-पुस्तक पढ़ाने के साथ ही व्याकरण-सम्बन्धी प्रश्न करना और समझाना विशेष लाभदायक सिद्ध हुआ है।

(८) पद्यों के अर्थ, अन्वय के अनुसार कराने का अभ्यास कराना चाहिये, और गद्य-खंडों को अपनी भाषा में स्पष्ट रीति से लिखवा कर समझाने का प्रयत्न कराना भी ज़रूरी है।

(६) जिन बातों के स्मरण रखने में विद्यार्थी बारम्बार भूल करते हैं उनका अभ्यास ख़ूब कस कर कराना चाहिये।

(१०) पाठों में दिये हुए अभ्यासों का अभ्यास अध्यापक महाशय को ध्यानपूर्वक करना चाहिए और हर पन्द्रहवें दिन पढ़ाये हुए पाठों के अभ्यासों से कुछ प्रश्न चुन कर तथा कुछ अपने मिला कर परीक्षा लेनी चाहिये।

प्रयाग
२०—८—३० }

{ दयाशंकर दुबे
गङ्गानारायण द्विवेदी
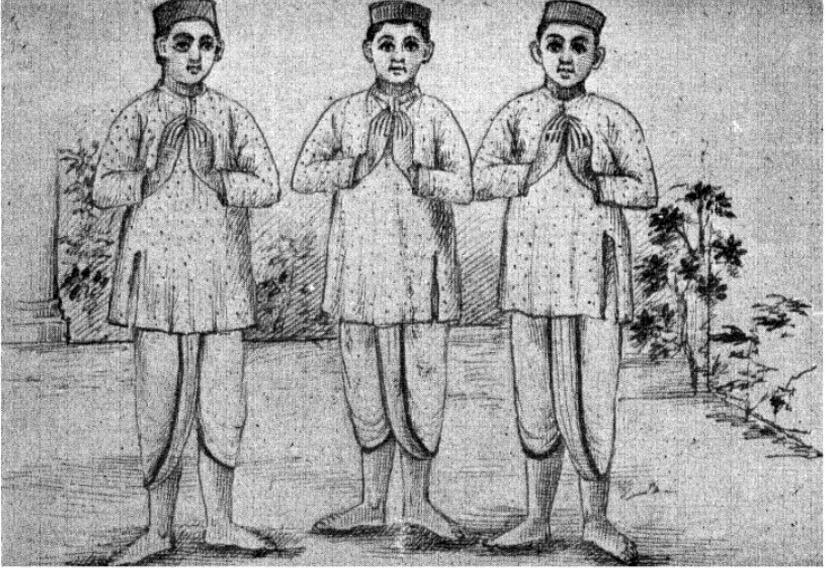
प्रार्थना

प्रथम भाग

१—परमपिता

हम अबोध बालक हैं, हमको बोध तुम्हीं हो देते ,
तुम्हीं हमारी जोवन-नौका भवसागर में खेते ;
हम न देखते, किन्तु हमारे साथ सदैव विचरते ,
देव ! हमारी देख-भाल सब काल तुम्हीं हो करते ।
संग लगी रहती शरीर के छाया हरदम जैसे ,
सदा हमारे साथ घूमती विपदायें भी वैसे ;
उनका तनिक ध्यान आते ही हम भय से कँप जाते ,
परमपिता ! बस, तुम्हीं हमें हो उनसे सदा बचाते ।

जहाँ तुम्हारी दिव्य दृष्टि की ओट तनिक हम होते .
वहाँ शीघ्र निज मार्ग भूल कर हम हैं धीरज खोते ;
तब उस नौकारोही-सा है होता हाल हमारा,
जिसे जलधि में देख न पड़ता पथ-दर्शक ध्रुव-तारा।
क्षमाशील करुणामय जो तुम होते कहीं न ऐसे,
तो इस निठुर जगत् में होता गुज़र हमारा कैसे ?
पद-पद पर भूलें हम करते, तुम हो हमें उठाते,
बार-बार हम गिरते हैं, पर तुम हो हमें उठाते।
जब हम होकर त्रस्त दुखों से, हैं अतीव घबराते,
तब तुम हमें दया-सागर ! क्या दया नहीं दिखलाते ?
धूल-धूसरित भी जब हम हैं निकट तुम्हारे आते,
तब भी तुम निज सुखद गोद में हमें समोद बिठाते।
एक दूसरे से आपस में हम सदैव हैं लड़ते,
ज़रा-ज़रा-सी बातों पर ही हम हैं रोज़ झगड़ते ;
एक पिता के सभी पुत्र हैं—यह न ध्यान में लाते,
परमपिता ! बस, तुम्हीं हमें हो उसकी याद दिलाते।
इधर-उधर की बातों में ही हम सब समय बिताते,
हम ऐसे निर्बोध निपट हैं, तुम्हें भूल से जाते ;
पर होकर जब श्रांत क्लांत हम शरण तुम्हारी आते,
तब लेकर निज अतुल अङ्क में हमको तुम्हीं सुलाते।

—गोपालशरण सिंह

अभ्यास

१—ईश्वर का रूप कैसा है? वह हमारे तुम्हारे साथ कैसे रहता है और वह हमारी तुम्हारी कैसे रक्षा करता है?

२—ईश्वर को भूलने पर क्या फल मिलता है? भूले हुए आदमी की क्या दशा होती है?

३—ईश्वर को सर्वव्यापक जान कर हमको क्या करना चाहिये?

४—इस पद्य के आधार पर "ईश्वर" पर एक छोटा सा लेख अपनी भाषा में लिखो।

५—निठुर, अतुल के शुद्ध रूप बतलाओ और "पद-पद पर" का भावार्थ बता कर इस शब्द का अपने बनाये वाक्य में प्रयोग करो।

२—कबीर साहब

संयुक्त प्रान्त में शायद ही कोई ऐसा हिन्दू हो जो कबीर साहब को न जानता होगा। कबीर साहब के भजन मंदिरों में और सत्संग के अवसरों पर गाये जाते हैं। उनकी साखियाँ प्रायः कहावतों का काम दिया करती हैं।

कबीर साहब एक पंथ के प्रवर्त्तक थे, जिसे कबीर पंथ कहते हैं। कबीर पंथियों में निम्न श्रेणी के लोग अधिकांश पाये जाते हैं। उनमें से कुछ तो साधू हैं जो गाँवों में कुटी बनाकर रहते हैं और कुछ गृहस्थ हैं। कबीर पंथी साधू सिर पर नोकदार पीले रंग की टोपी पहनते हैं।

कबीर साहब कौन थे? कहाँ और किस समय में उत्पन्न हुए? उनका असली नाम क्या था? बचपन में वे कौन धर्माव-लम्बी थे? उनका विवाह हुआ था या नहीं और वे कितने समय तक जीवित रहे? इन बातों मे बड़ा मत भेद है। कबीर साहब की जीवनी लिखने वाले भिन्न भिन्न बातें बतलाते हैं। उनमें सत्य का अंश कितना है, इसका पता लगाना सहज नहीं है। "कबीर कसौटी" में कबीर साहब का जन्म संवत् १४५५ वि० में और मरण १५७५ वि० में होना लिखा है। कबीर पंथी लोग उनकी उम्र तीन सौ वर्ष की बतलाते हैं। उनके कथना-नुसार कबीर साहब का जन्म १२०२ वि० में और मरण १५०५ वि० में हुआ है। इनमें से किसकी बात सत्य है इसका निर्णय करना बड़ी खोज का काम है। कबीर पंथ के विद्वानों की राय में कबीर साहब का जन्म संवत् १४५५ ही सत्य कहा जाता है।

कबीर साहब ने अपने को जुलहा लिखा है। एक जगह वे कहते हैं।

तू ब्राह्मण मैं काशी का जुलहा बूझहु मोर गियाना।

(आदि ग्रंथ)

इससे अब इस बात में तो कुछ संदेह रह ही नहीं जाता कि कबीर साहब जुलाहे थे। परन्तु वे जन्म के जुलाहे नहीं थे, यह कहावतों से मालूम होता है।

कहा जाता है कि संवत् १४५५ की ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा

...की विधवा कन्या के पेट से एक पुत्र पैदा
. लोक-लज्जावश उसने बालक को काशी के लहर तालाब के किनारे फेंक दिया। संयोग से नीरू जुलाहा अपनी स्त्री नीमा के साथ उसी राह से आ रहा था। उसने उस अनाथ बच्चे को घर लाकर पाला। पीछे वही कबीर नाम से विख्यात हुआ।

कबीर साहब बालकपन से ही बड़े धर्मपरायण थे। जब उनको सुध बुध हो गयी तब वे तिलक लगा कर राम राम करते थे। एक जुलाहे के घर में रहकर तिलक लगाना और राम राम जपना असंभव सा प्रतीत होता है। परन्तु संगति का प्रभाव बड़ा विचित्र होता है। वह असंभव को भी संभव कर देता है।

ऐसी कहावत है कि कबीर साहब स्वामी रामानन्द के शिष्य थे। स्वामी रामानन्द शेष रात्रि में गङ्गा-स्नान के लिये मणि-कर्णिका घाट पर नित्य जाया करते थे। एक दिन इसी समय कबीर साहब घाट की सीढ़ियों पर जाकर सो रहे। अंधेरे में स्वामी जी ने कहा—"राम राम कह, राम राम कह।" कबीर साहब ने उसी को गुरु मंत्र मान लिया। उसी दिन से उन्होंने काशी में अपने को स्वामी रामानन्द का शिष्य प्रसिद्ध किया। यवन के घर में पले होने पर भी कबीर साहब की प्रवृत्ति हिन्दू धर्म की तरफ अधिक थी।

कबीर साहब अपने जीवन का निर्वा‌ह
व्यवसाय करके ही करते थे। यह बात वे स्वः
हैं—

हम घर सूत तनहिं नित ताना। हम घर सूत तनहिं नित ताना।

कबीर साहब ने विवाह किया था या नहीं, इस विषय में भी बड़ा मतभेद है। कबीर पंथ के विद्वान् कहते हैं कि लोई नाम की स्त्री उनके साथ आजन्म रही, परन्तु उन्होंने उससे विवाह नहीं किया। इसी प्रकार कमाल उनका पुत्र और कमाली उनकी पुत्री थी, इस विषय में भी विचित्र बातें सुनी जाती हैं। "बूड़ा बंस कबीर का उपजे पूत कमाल" यह भी एक कहावत सा प्रसिद्ध हो रहा है, इससे पता चलता है कि कबीर ने विवाह अवश्य किया था और कमाल कबीर का पुत्र था। कमाल भी कविता करता था। परन्तु उसने कबीर साहब के सिद्धान्तों के खण्डन करने ही में अपनी सारी उम्र बिता दी। इसी से "बूड़ा बंस कबीर का उपजे पूत कमाल" कहा गया है।

कबीर साहब बड़े ही सुशील और बड़े सदाचारी थे। एक दिन की बात है कि उनके यहाँ बीस पचीस भूखे फकीर आये। कबीर साहब के पास उस दिन कुछ खाने को नहीं था, इसलिये वे बहुत घबराये। लोई ने कहा—यदि आज्ञा हो तो मैं एक साहूकार के बेटे से कुछ रुपया लाऊँ क्योंकि वह मुझ पर मोहित है, मैं पहुँची नहीं कि उसने रुपये दिये नहीं। कबीर साहब ने कहा—जाओ ले आओ। लोई साहूकार के बेटे के पास

ने उससे अपना अभिप्राय कह सुनाया। साहूकार
ने तत्काल धन दे दिया। जब अन्त में उसने अपना मनोरथ प्रकट किया तब लोई ने रात में मिलने का वादा किया।

दिन खाने खिलाने में बीत गया। रात हुई, चारों ओर अँधेरा छा गया, संयोग से उस दिन पानी बरस रहा था। लोई ने कबीर साहब से सब वृत्तान्त कह दिया था, इससे कबीर साहब को चैन नहीं थी, वे सोचते थे कि जिसकी बात गयी, उसका सब गया। उन्होंने हवा पानी की कुछ भी परवा न की और कम्बल ओढ़ कर स्त्री को कंधे पर बिठा कर साहूकार के घर पहुँचे। आप तो बाहर खड़े रहे और लोई भीतर चली गयी। न तो उसके कपड़े भींगे थे और न उसके पैर में कीचड़ ही लगी थी, यह देख कर साहूकार के लड़के ने इसका कारण पूछा। लोई ने सच सच कह दिया; यह सुन कर साहूकार के बेटे की कुवृत्ति बदल गयी, वह लोई के पैर पर गिर पड़ा और कहा—तुम मेरी मा हो। इतना कह कर वह बाहर आया और कबीर साहब के पैर से लिपट गया। उसी दिन से उनका सच्चा सेवक बन गया।

कबीर साहब के जीवन-चरित्र में ऐसी बहुत सी कथाएँ हैं जिनसे उनकी सच्चरित्रता प्रकट होती है।

कबीर साहब पढ़े लिखे न थे। सतसंगी थे। सतसंग से ही उन्होंने हिन्दू-धर्म की गूढ़ गूढ़ बातें जान ली थीं। उनके

हृदय में हिन्दू-मुसलमान किसी के लिये द्वे‌‌ष
बड़े पक्षपाती थे। जहाँ उन्हें सत्य के विरुद्ध कु...
वहाँ उन्होंने उसका खण्डन करने में जरा भी हिचकिच...
दिखलायी।

कबीर साहब ने अपना अधिकार हिन्दू-मुसलमान दोनों पर जमाया। आजकल भी हिन्दू मुसलमान दोनों प्रकार के कबीर पंथी मिलते हैं। परन्तु सर्वसाधारण हिन्दू और मुसलमान दोनों का कबीर मत से बैर हो गया। हिन्दू धर्म के नेता एक अहिन्दू के मुख से हिन्दू-धर्म का प्रचार देख कर भड़के और मुसलमान कबीर साहब के हिन्दू आचार्य का शिष्य होने तथा हिन्दू-धर्म का प्रचार करने के कारण कट्टर विरोधी हो गये। इस विरोध के कारण उनको बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ भोगनी पड़ीं। परन्तु उनके हृदय में जो सत्य का दीपक जल रहा था वह किसी के बुझाये न बुझा।

कबीर साहब ने स्वयं कोई पुस्तक नहीं लिखी। वे साखी और भजन बना कर कहा करते थे, और उनके चेले उसे कंठस्थ कर लेते थे, पीछे से वह संग्रह कर लिया गया। कबीर पंथ के अधिकांश उत्तम उत्तम ग्रंथ उनके शिष्यों के रचे हुए कहे जाते हैं।

"खास ग्रंथ" में निम्नलिखित पुस्तकें हैं।

१—सुखनिधान २—गोरखनाथ की गोष्ठी ३—कबीर पाँजी ४—बलख की रमैनी ५—आनन्द रामसागर ६—रामानन्द की

ब्दावली ८—मंगल ६—बसन्त १०—होली ११—
१२—झूलन १३— कहरा १४—हिन्डोल १५—बारहमासा
१६—चाँचर १७—चौंतीसी १८—अलिफ़नामा १६—रमैनी २०—
साखी २१—बीजक।

कबीर पंथियों में बीजक का बड़ा आदर है। बीजक दो हैं—एक तो बड़ा जो स्वयं कबीर साहब का काशिराज से कहा हुआ बतलाया जाता है और दूसरे बीजक को कबीर के एक शिष्य भग्गूदास ने संग्रह किया है। दोनों में बहुत कम अन्तर है।

कबीर साहब का उलटा प्रसिद्ध है। मेरी समझ में लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए ही कबीर साहब ऐसा कहा करते थे। यों तो अर्थ लगाने वाले कुछ न कुछ उलटा सीधा अर्थ लगा ही लेते हैं, परन्तु खींच तान कर लगाये हुए ऐसे अर्थों में कुछ विशेषता नहीं रहती।

कबीर साहब मूर्तिपूजा के कट्टर विरोधी थे। यद्यपि ईश्वर का अवतार धारण करना भी वे नहीं मानते थे, परन्तु अपने को उन्होंने स्वयं सत्यलोकवासी प्रभु का दूत बतलाया है। वे कहते हैं—

काशी में हम प्रगट भये हैं रामानन्द चेताये।
समरथ का परवाना लाये हंस उबारन आये॥

(शब्दावली)

लोगों का ऐसा कथन है कि मगहर में प्रा॰
मुक्ति नहीं मिलती। भला सत्यान्वेषक कबीर इस
मान सकते थे. उन्होंने लोगों का यह भ्रम मिटाने के लिये ह॰
हर में जाकर शरीर छोड़ा। इस विषय में उन्होंने कहा है—जो
कबीर काशी मरे तो रामहिं कौन निहोरा।

* * * * *

जस काशी तस मगहर ऊसर हृदय राम जो होई।

कबीर साहब की कविता में बड़ी शिक्षा भरी है। एक एक पद से उनकी सत्यनिष्ठा प्रकट होती है। उन्होंने जो कहा है, प्रायः सभी एक से एक बढ़कर हैं। बातें तो छोटी हैं, परन्तु उनमें अगाध ज्ञान भरा हुआ है।

—रामनरेश त्रिपाठी

अभ्यास

१—कबीरदास का कोई भजन या दोहा तुम्हें याद हो तो अपने अध्यापक को सुनाओ। न याद हो तो याद करके सुनाओ।

२—कबीरदास किसके शिष्य थे और कैसे शिष्य बने थे?

३—कबीरदास कितने सत्यभक्त, सदाचारी और सुशील थे? इस की कोई कथा लिख कर सिद्ध करो। इनसे साधारण हिन्दू मुसलमान क्यों अप्रसन्न रहते थे?

४—कबीर पंथ का हाल बताओ।

५—गियाना, समरथ का शुद्ध रूप बतलाओ।

६—कबीर के सिद्धान्त क्या थे?

३—शरीर-रक्षा

शरीर ही के हित काम सारे।
शरीर ही से सुख हैं हमारे।
आत्मा नहीं धार्य बिना शरीर—
जैसे बिना पिञ्जर-बद्ध कीर ॥ १ ॥

शरीर से पुण्य परोपकार ;
शरीर ही है गुण का अगार।
शरीर ही है सुर-लोक-द्वार ;
शरीर ही से सुविचार सार ॥ २ ॥

शरीर ही से पुरुषार्थ चार ;
शरीर की है महिमा अपार।
शरीर रक्षा पर ध्यान दीजे ;
शरीर-सेवा सब छोड़ कीजे ॥ ३ ॥

—महावीर प्रसाद द्विवेदी

अभ्यास

१—शरीर से क्या क्या लाभ हैं ?

२—पुरुषार्थ चार से क्या मतलब समझते हो ?

३—शरीर-रक्षा क्यों किस प्रकार करनी चाहिए ?

४—साबित करो कि "शरीर" ही के द्वारा मनुष्य-जीवन सफल होता है।

४—सेठ प्रेमचन्द रायचन्द

जिन महापुरुषों ने निर्धन माता पिता के घर उत्पन्न हो अपने बुद्धिबल से, अपने प्रयत्न प्रयास से, संसार में सुयश प्राप्त किया है ; जिन महापुरुषों का नाम संसार भर में अब भी पूर्ण आदर की दृष्टि से उच्चारित होता है, उनमें बम्बई इलाके में सब से पूज्य प्रेमचन्द थे।

आप के पिता का नाम रायचन्द दीपचन्द था। ये सूरत के रहने वाले थे। इन्हीं के शुभ-गृह में स्वनामधन्य प्रेमचन्द का सन् १८३१ ई० में जन्म हुआ था। रायचन्द एक ग़रीब और सामान्य स्थिति के व्यापारी और दलाल थे। सूरत में इनका व्यापार ठीक न चलने के कारण ये सकुटुम्ब बम्बई आये और रतनचन्द लाला नामक एक दलाल के साथ कार्य करने लगे। प्रेमचन्द के पठन पाठन का समयोचित प्रबन्ध कर दिया गया। इनको अङ्गरेज़ी की शिक्षा दी जाने लगी। बाल्यावस्था ही से प्रेमचन्द का भविष्य झलकता था। "पूत के लक्षण पालने में" यह कहावत बालक प्रेमचन्द के लिए पूर्णरूप से चरितार्थ होती थी।

यद्यपि रतनचन्द लाला का सर्वदा बैंकों में उन अङ्गरेज़ों से काम पड़ता था जो भारतवर्षीय अन्य भाषाओं से अनभिज्ञ थे, तथापि वे अङ्गरेज़ी बिलकुल नहीं जानते थे। अतः वे प्रेमचन्द को, जिनकी अवस्था अभी केवल सोलह वर्ष की थी और जो कुछ अङ्गरेज़ी भी जानते थे, अपने साथ रखने लगे। अपनी

बुद्धिमानी से, अपने चाल चलन से प्रेमचन्द थोड़े ही समय में बैंकों के मनेजर और अँगरेज़ व्यापारियों के विश्वासप्रात्र बन गये और स्वतंत्र दलाली के कार्य में प्रवृत्त हुए। इसी अरसे में रतनचन्द लाला का स्वर्गवास हो गया, तब प्रेमचन्द उनका भी कार्य अपने हाथ से सम्पादन करने लगे। सेठ रायचन्द और उनके बुद्धिशाली पुत्र प्रेमचन्द दोनों दलाली करने लगे और थोड़े ही समय में सट्टे रुई तथा अफ़ीम के व्यवसाय में अपूर्व लाभ और मान सम्पादन किया। दिनों दिन अँगरेज़ों में इनका मान बढ़ता गया। इसी समय अमेरिका में सिविल वार आरम्भ हुई।

इस समय प्रेमचन्द पर धन जन यश तीनों की कृपा होने से ये रुई के व्यवसाय में एक दम आगे बढ़े। योरुप से दिनों दिन रुई की विशेष माँग आने लगी और प्रेमचन्द उसे चढ़ते दामों में भेजने लगे। शहर शहर ग्राम ग्राम अपने गुमाश्ते भेज वे खेतों की सम्पूर्ण रुई खरीद लेते थे। इस कार्य में उन पर लक्ष्मी जी की पूर्ण कृपा रही। धीरे धीरे मेसर्स रिची स्टुअर्ट कंपनी ने प्रेमचन्द जी को अपना स्वतन्त्र दलाल नियत किया। उन्होंने सट्टे बट्टे का रोजगार आरम्भ किया और बड़ी बड़ी कम्पनियों के शेयर दुगने और तिगुने दामों पर बेचना आरम्भ किया। संक्षेप में, सम्पूर्ण बंबई प्रान्त का बाज़ार इनके हाथ में हो गया। शेयरों के भाव के विषय में लोग प्रायः यही कहा करते थे कि "आज तो यह भाव है;

परन्तु कल की तो भाई प्रेमचन्द जी जानें।" हर रोज़ सुबह व शाम सेठ प्रेमचन्द जी के यहाँ राजदरबार की तरह व्यापारियों और मैनेजरों की सभा होती थी। थोड़े ही समय में प्रेमचन्द पर लक्ष्मी की ऐसी कृपा हुई कि एक दो की कौन कहे, वे नौ करोड़ के मालिक हो गये। वे केवल भारतवर्ष ही नहीं वरन् योरुप के बज़ारों में भी एक अच्छे व्यापारी और सिद्धहस्त दलाल गिने जाते थे।

जिस प्रकार प्रेमचन्द बुद्धिशाली और उद्योगशील व्यापारी थे, उसी प्रकार उदार भी थे। जैसे जैसे उन्हें लक्ष्मी मिलती गयी, वैसे वैसे वे उसका सद्व्यय भी उदारता से करने लगे। शिक्षा विभाग में उन्होंने कलकत्ता और बंबई के विश्वविद्यालयों में अच्छी अच्छी रकमें दीं। इसके अतिरिक्त सूरत, भरोच, अहमदाबाद इत्यादि प्रान्तों में स्थान स्थान पर पाठशालाएँ स्थापित कीं। स्थान स्थान पर मुसाफिरों के लिये धर्मशालाएँ भी बनवाईं। प्रेमचन्द रायचन्द की उदारता का नमूना बंबई की राजा भाई टावर, जिसको इन्होंने अपनी मातु श्री के स्मारक में बनवाई थी, वर्त्तमान है और इनकी सुयश रूपी ध्वजा धारण किए हुए है। परन्तु समय बड़ा बली है। जो प्रेमचन्द शेयर सट्टे के राजा गिने जाते थे, वे कई करोड़ के घाटे में आ पड़े। किसी ने सच कहा है कि "समय के फेर से सुमेरु होत माटी को।" शेयरों के रोज़गार में घाटा देख उन्होंने रुई का रोज़गार शुरू किया। परन्तु अमेरिका में लड़ाई बन्द

हो जाने से रुई का भाव एक दम घट गया और प्रेमचन्द जी को इसमें भी बहुत भारी नुकसान सहना पड़ा। ऐसे कठिन समय में प्रेमचन्द जी ने अपने लेनदारों को बहुत समझाया कि वे कुछ दिनों सब्र करें, परन्तु किसी ने भी न सुना और उनके ऊपर नालिश पर नालिश होने लगी। परन्तु प्रेमचन्द जरा भी विचलित न हुए और मरण पर्यन्त पुनः रोज़गार ही करते रहे और सब का देना चुका कर तथा सुयश प्राप्त कर ७६ वर्ष की अवस्था में स्वर्गलोक को प्रस्थानित हुए।

सेठ प्रेमचन्द रायचन्द के दानों के संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैं। बंबई-विश्वविद्यालय को छः लाख पच्चीस हज़ार। कलकत्ता विश्वविद्यालय को चार लाख पच्चीस हज़ार। बंबई में रायचन्द दीपचन्द के सत्र को पाँच लाख। अहमदाबाद ट्रेनिङ्ग कालेज को अस्सी हज़ार। सूरत की धर्मशाला में पैंसठ हज़ार। फ़्रीयर फ़्रेचर कन्या पाठशाला को साठ हज़ार। स्काटिश आर्फनेज को पचास हज़ार। जूनागढ़ में गिरनार की धर्मशाला में चालीस हज़ार। भरोच में रायचन्द दीपचन्द पुस्तकालय को तीस हज़ार। सूरत में रायचन्द दीपचन्द कन्या पाठशाला को बीस हज़ार। गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी को बीस हज़ार। "आनन्द" धर्मशाला में बीस हज़ार। सूरत स्वामी (वत्सल) आश्रम को दस हज़ार। एलेकजेंड्रा कन्या पाठशाला को दस हज़ार। भरौच लाइब्रेरी को पाँच हज़ार।

इन दानों के सिवाय गुजरात और काठियावाड़ के ७६

ग्रामों में धर्मशालाएँ, कुवें और तालाबों के जीर्णोद्धार में उनके छः लाख रुपये लगे थे। इन महानुभाव ने अपने जैनधर्म के मन्दिरों और जैनधर्म के प्रचार के लिये दस लाख खर्च किये थे। इन सब रकमों के अतिरिक्त वे प्रतिमास आठ हज़ार रुपये ग़रीब कंगालों को बाँटा करते थे।

सूरत और अन्य नगरों में मालूम पड़ जाने पर, विपद्ग्रस्त जैनियों को भी अवश्य सहायता देते थे। इस खाते में इनके अढ़ाई लाख रुपये खर्च हुए थे। जैनियों को यात्रा में बड़ी अड़चन पड़ा करती थी। जिनके उद्धार में इनको डेढ़ लाख रुपये खर्च करने पड़े थे। अपने जीवन काल में इन्होंने एक लाख नब्बे हज़ार रुपये अपने नौकरों को बाँटे थे।

जिस महानुभाव ने एक सामन्य गृहस्थ के घर जन्म ले कर निज पुरुषार्थ से इतना विपुल वैभव प्राप्त किया, उसे भी काल भगवान् ने न छोड़ा और २१ अगस्त सन् १९०६ ई० को वे इस संसार से चल बसे।

सेठ जी यद्यपि अब इस संसार में नहीं हैं तथापि उनके यश की घटा गगनमण्डल में उनके गुणों का प्रकाश फैला रही है और इतर जनों को शिक्षा दे रही है कि धन पास होने पर उसका किस प्रकार सदुपयोग करना चाहिये।

—श्री साँवल जी नागर

अभ्यास

१—प्रेमचन्द्र की संक्षिप्त जीवनी में उनके जीवन के मुख्य मुख्य अनुकरणीय गुण दर्शाओ।

२—इनकी जीवनी पढ़ कर तुम क्या क्या उपदेश ग्रहण करोगे?

३—प्रेमचन्द्र जी के दान का वर्णन करो।

५—वर्षा और शरद

वर्षा काल मेघ नभ छाये। गरजत लागत परम सुहाये॥
दामिनी दमकि रही घन माहीं। खल की प्रीति यथा थिर नाहीं॥
वर्षहिं जलद भूमि नियराये। यथा नवहिं बुध विद्या पाये॥
बुन्द अघात सहैं गिरि कैसे। खल के वचन संत सह जैसे॥
छुद्र नदी भरि चलि उतराई। जस थोरेहि धन खल बौराई॥
भूमि परत भा डाबर पानी। जिमि जीवहिं माया लपटानी॥
सिमिटि २ जल भरहिं तलावा। जिमि सद्गुण सज्जन पहँ आवा॥
सरिता जल जलनिधि महँ जाई। होय अचल जिमि हरि जन पाई॥

दोहा—हरित भूमि तृण संकुलित, समुझि परै नहिं पंथ।
जिमि पाखंड विवाद तें, लुप्त होहिं सद ग्रंथ॥

दादुर धुनि चहुँ ओर सुहाई। पढ़े वेद जनु बटु-समुदाई॥
नव पल्लव भे विटप अनेका। साधु के मन जस होइ विवेका॥
अर्क जवास पात बिन भयऊ। जिमि सुराज खल उद्यम गयऊ॥
खोजत पंथ मिले नहिं धूरी। करै क्रोध जिमि धर्महिं दूरी॥

सस संपन्न सोह महि कैसी । उपकारी की संपति जैसी ॥
निशि तम घन खद्योत विराजा । जनु दंभिन कर जुग समाजा ॥
महा वृष्टि चलि फूटि कियारी । जिमि स्वतंत्र होइ बिगरहिं नारी ॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना । जिमि बुध तजहिं मोह मद माना ॥
देखिय चक्रवाक खग नाहीं । कलिहि पाय जिमि धर्म पराहीं ॥
ऊसर बरसे तृन नहिं जामा । जिमि हरिजन हिय उपज न कामा ॥
विविध जन्तु संकुल महि भ्राजा । बढ़े प्रजा जिमि पाइ सुराजा ॥
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना । जिमि इन्द्रिय गण उपजे ज्ञाना ॥

दोहा—कबहुँ प्रबल चल मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिं ।
जिमि कुपूत कुल ऊपजे, संपति धर्म नसाहिं ॥
कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम, कबहुँक प्रगट पतंग ।
उपजे बिनसै ज्ञान जिमि, पाय सुसंग कुसंग ॥

वर्षा बिगत शरद ऋतु आई । लक्ष्मण देखहु परम सुहाई ॥
फूले कास सकल महि छाई । जनु वर्षाकृत प्रगट बुढ़ाई ॥
उदित अगस्त पंथ जल सोखा । जिमि लोभहि सोखै संतोषा ॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा । सन्त हृदय जस गत मद मोहा ॥
रस रस सूख सरित सर पानी । ममता त्याग करहिं जिमि ज्ञानी ॥
जानि शरद ऋतु खञ्जन आये । पाय समय जिमि सुकृत सुहाये ॥
पंक न रेणु सोह अस धरनी । नीति निपुण नृप की जस करनी ॥
जल संकोच बिकल भये मीना । विविध कुटुम्बी जिमि धन हीना ॥
बिन घन निर्मल सोह अकाशा । जिमि हरिजन परिहरि सब आशा ॥
कहुँ कहुँ वृष्टि शारदी थोरी । कोउ एक पाव भक्ति जिमि मोरी ॥

दोहा—चले हरषि तजि नगर नृप, तापस बणिक भिखारि।
जिमि हरि भक्तहि पाइ जन, तजहिं आश्रमो चारि ॥

सुखो मीन जहँ नीर अगाधा। जिमि हरि शरण न एकौ बाधा ॥
फूले कमल सोह सर कैसे। निर्गुन ब्रह्म सगुन भये जैसे ॥
गुंजत मधुकर निकर अनूपा। सुन्दर खग रव नाना रूपा ॥
चक्रवाक मन-दुख निशि पेखी। जिमि दुर्जन पर संपति देखी ॥
चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहै न शंकर द्रोही ॥
शरद ताप निशि शशि अपहरई। संत दरश जिमि पातक टरई ॥
देखहिं बिधु चकोर समुदाई। चितवहिं जिमि हरिजन हरिपाई ॥
मशक दंश बीते हिमत्रासा। जिमि द्विज द्रोह किये कुलनासा ॥

दोहा—भूमि जीव संकुल रहे, गये शरद ऋतु पाय ॥
सतगुरु मिले ते जाहिं जिमि, संशय भ्रम समुदाय॥

अभ्यास

१—वर्षाऋतु का वर्णन संक्षेप में लिखो। इस पाठ के अतिरिक्त वर्षा में जो दृश्य तुम देखते हो उनका भी वर्णन करो।

२—वर्ष में कितनी ऋतुयें होती हैं उनके नाम महीनों सहित लिखो।

३—वर्षा और शरद के वर्णन में तुलसीदास जी ने क्या विशेषता दिखलाई उसको समझा कर बतलाओ।

४—इस पाठ को पढ़ कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर समझा कर दो।

(१) दुष्ट की प्रीति कैसी होती है ?

(२) दुष्ट के वचन सन्त कैसे सहते हैं ?

(३) सुराज्य का क्या प्रभाव होता है ?

(४) नीति निपुण राजा की करनी कैसी होती है ?

५—थिर, छुद्र, तृन शब्दों के शुद्ध रूप लिखो।

६—चीन की राजधानी

एशिया के उन्नतशील राष्ट्रों में हम चीन को भी मान सकते हैं, यद्यपि यहाँ के निवासी अभी तक पुरानी लकीर के फ़क़ीर ही बने हुए हैं। अँग्रेज़ी के संसर्ग से भारतवासियों और यूरोपीय शिक्षा दीक्षा के संसर्ग से जापान वालों के रहन-सहन रीति रवाज में अनेक परिवर्तन हुए हैं और नित्य-प्रति हो रहे हैं। पाश्चात्य सभ्यता का प्रवेश यद्यपि पूर्ण रूप से चीन में अभी नहीं हुआ है, परन्तु धीरे धीरे यूरोपीय आचार-विचार और व्यवहार चीन में भी अपना सिक्का जमा रहे हैं। इससे हम अनुमानतः कह सकते हैं कि एक शताब्दी के भीतर चीन की काया पलट जायगी।

चीन के प्रसिद्ध नगरों के विषय में यहाँ पर कुछ लिखा जायगा। दक्खिनी चीन की प्राचीन राजधानी नानकिङ्ग है। चीन में धान की खेती अधिकता से होती है। प्राचीन काल में इस नगर की जितनी महत्ता और गौरवता थी, आज उसका

शतांश भी नहीं है। इस नगर के चारों ओर एक परकोटा बना हुआ है जिसकी दीवालें २२ मील लम्बी हैं। दीवालों के बीच में जितना भू-भाग है उसका अधिकांश ऊसर है, बहुत थोड़े हिस्से में खेती की जाती है। एक समय यहाँ परीक्षा का एक बड़ा "हाल" था, जिसमें पहले बीस हज़ार के लगभग विद्यार्थी इम्तहान देने के लिए बैठते थे, परन्तु इस समय इस "हाल" की दशा बड़ी ख़राब है। हाल टूट फूट और नष्ट भ्रष्ट हो गया है। प्राचीन मिंग नरेशों की क़ब्रें भी गिरी दशा में हैं, जिनकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया है। ये क़ब्रें शहर के बाहर हैं।

चीन की वर्तमान राजधानी पेकिंग एक ऐतिहासिक नगर है। समय समय पर इस नगर में अनेकों परिवर्तन हुए हैं। ईसा से कोई एक हज़ार दो सौ वर्ष पूर्व यह नगर, कहा जाता है, वर्तमान था। आज कल इसकी जैसी अवस्था है उससे कह सकते हैं कि इसके चार भाग किये जा सकते हैं। चारों भागों को पृथक पृथक नगर मानना चाहिये। चारों नगरों के चारों ओर सुरक्षित परकोटे बने हुए हैं। सबसे पहले दक्खिन में चीनियों की बस्ती है, इससे मिला हुआ उत्तर की ओर टारटरों की बस्ती है। इस बस्ती के बीच में शाही नगर है और शाही नगर के बीच में दीवालों से घिरा हुआ "सुरक्षित नगर" वर्तमान है।

फौजों के रहने के लिये एक दूसरा स्थान है। इसे भी एक

पृथक् नगर मान सकते हैं। इस नगर में विदेशी दूत रहते हैं। विदेशियों के बैंक तथा अन्य व्यापारिक कार्यालय भी इस भाग में बने हुए हैं। यूरोपियनों की अधिक बस्ती होने के कारण हम इसे उनका केन्द्र या "अड्डा" मान सकते हैं। हाल में चीन में जो उपद्रव हुए थे उनसे बचने के लिये बहुत से लोगों ने यहीं पर शरण ली थी। बाक्सर के झगड़े या विप्लव के अनन्तर यह निश्चय किया गया था कि इस बस्ती के भीतर कोई चीनी पुरुष न रहने पावे और इस नगर के बाहर जितने विदेशी रहते थे उनमें से पादरियों को छोड़ कर और कोई न रहने पावे। अब चूँकि चीन में शांति की एक प्रकार से पुनः स्थापना हो गई है अतः नियम और नियंत्रण प्रायः तोड़ सा दिया गया है। क्योंकि टारटर नगर में बहुत से होटल और दूकाने विदेशियों की ओर से स्थापित की गई हैं, पेकिङ्ग के अन्य "हूतंग" (गलियों) में भी यूरोपीय आबाद देखे गये हैं। "हूतंग" तंग गलियों के नाम हैं। इनमें पूर्व काल में चीनी लोग रहते थे, परन्तु ये बड़ा सीधा-साधा, जीवन बसर करते थे, साधारण तौर पर घर बने हुए थे और ऊपरी तड़क भड़क का नाम मात्र न था। कदाचित्त ऐसा इसलिए किया जाता होगा, क्योंकि चीनियों को अपने धन की रक्षा के लिए साधारण लोगों की सी वेष भूषा धारण करना आवश्यक समझा जाता था। छोटे छोटे दरवाज़ों द्वारा इन गलियों में प्रवेश किया जा सकता है। गलियाँ बड़ी तंग और पतली हैं। जगह जगह पर मुड़ी हुई हैं। रिकशा या उसी तरह की मालगाड़ी इसके भीतर से

मुशकिल से आ जा सकती है। सुरक्षित नगर में यों तो प्रवेश करने की मनाही है, परन्तु अधिकारियों की विशेष आज्ञा से कुछ भाग में भ्रमण किया जा सकता है। एक विदेशी यात्री ने इस नगर के कुछ भाग की यात्रा की थी। उसने इसके सम्बन्ध में कुछ लिखा है उसका सारांश हम यहाँ पर दे देना उचित समझते हैं. क्योंकि चीन के इतने भाग की जानकारी बहुत कम है। " नगर के एक हिस्से में जहाँ पर चीन का सम्राट् रहता था (यद्यपि उस समय वह बन्दी हालत में था) वहाँ आने जाने की किसी को भी इजाजत नहीं मिल सकती थी। बाहरी फाटक से हम लोगों को कुछ कमरे दिखलाई दिये। आज कल यहाँ एक अजायब घर है जिसमें चीनी मिट्टी के बने हुए बहुमूल्य बर्तन और नक्काशी मौजूद है। वास्तव में पहले यह सब चीज़ें राजमहल में ही रक्खी रहती थीं। इसके बाद हम लोगों ने आँगन को पार किया। आँगन के पश्चात् अतिथि अथवा राज कर्मचारियों से मिलने मिलाने और मन्त्रणा करने वाला कमरा मिला। तदनन्तर विलासाश्रम की अनुपम और भव्य इमारत दिखाई देती है। यहाँ के समस्त भवन पीले पीले खपड़ैलों से छाये हुए हैं। प्रत्येक हाल से मिला हुआ संगमरमर का एक चबूतरा है। संगमरमर के पुल भी यत्र तत्र वर्तमान हैं। महल का आन्तरिक दृश्य अत्यन्त सुन्दर है। छत और फ़र्श की नक्काशी और चित्र-कला देखते ही बनती है। समस्त वस्तुओं की सज धज का वर्णन नहीं किया जा सकता। महल के पास ही एक बाग़ भी है। बाग़ में एक स्थान पर चौकौर

घेरा है जिसमें कई एक प्रकार के रंगों के संगमरमर जड़े हुए हैं। ये टुकड़े चीन के अनेक भागों से लाये गये थे। पीला, काला, लाल, सफ़ेद और नीला इन पाँच रंगों के पत्थर हैं। अनेक लोगों का कहना है कि उनका प्रयोजन चीन के पाँच मौसिमों और पाँच जाति के मनुष्यों से है। वर्तमान प्रजातन्त्र-राज्य का जो झंडा है वह इन्हीं पाँचों रंगों के मिश्रण से बना है।"

इत्यादि बातों का वर्णन लेखक ने किया है। जिसे पढ़कर चीन की दशा का पता चल जाता है।

—रामप्रसाद त्रिपाठी एम० ए०

अभ्यास

१—पुरानी लकीर के फ़कीर, कायापलट, मुहाविरों को अपनी भाषा में प्रयोग करो।

२—नानकिंग का वर्णन करो।

३—पाश्चात्य देशों का प्रभाव चीन पर क्या पड़ा है?

४—पेकिंग नगर का वर्णन करो।
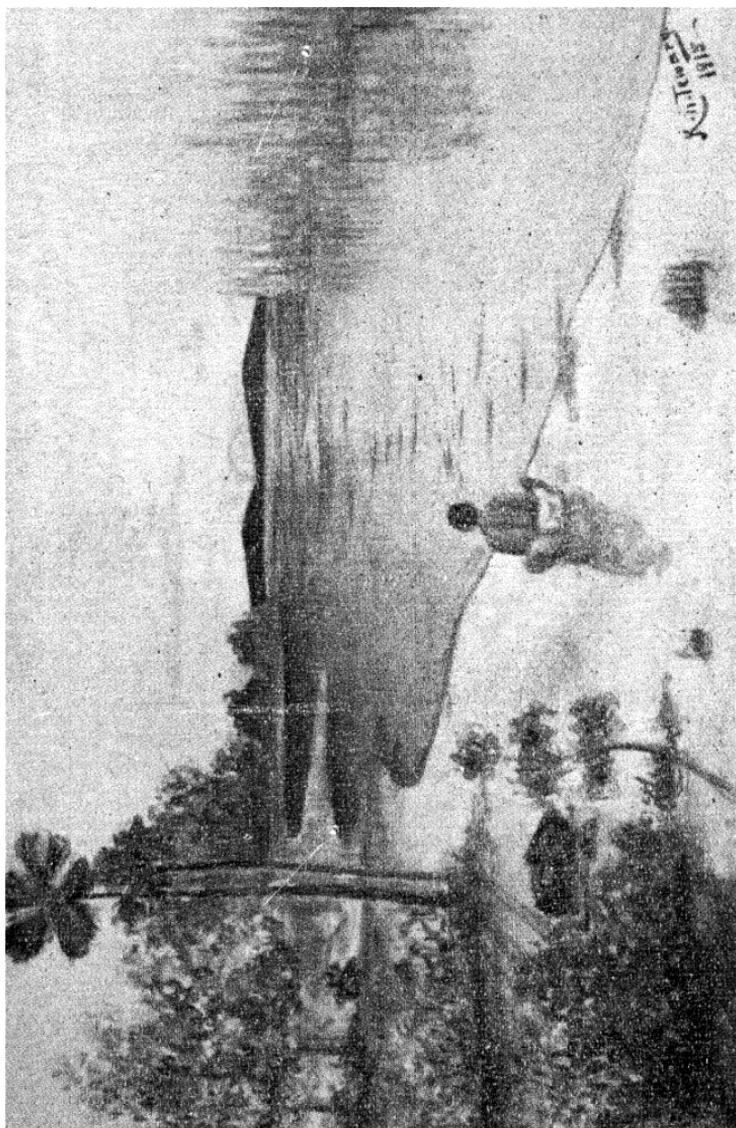
प्रभात

७–प्रभात

(१)

बीती रात प्रभात हुआ अब,
कुक्कुट लगा मचाने शोर।
जागृति हुआ सुषुप्त जगत फिर,
फैला कोलाहल चहुँ ओर॥
बड़े प्रेम से पक्षी हिल मिल,
करने लगे मधुर सुर गान।
कर्म-सूत्र-आबद्ध पूर्व में,
उदित हुये भास्कर भगवान॥

(२)

ले हल बैल चले खेतों को,
निद्रा तज कर श्रमी किसान।
चरवाहे ढोरों को लेकर,
वन को जाते प्रमुदित प्राण॥
केवट चला नदी को देखो,
राह पथिक ने ली निज भ्रात।
मैदानों में मृदुल मेमनें,
उछल रहे हैं पुलकित गात॥

(३)

खिले ताल में कमल मनोहर
भ्रमर जहाँ करते हैं गुञ्ज।
फूलों से हो रहे अलंकृत
जुही, कनेर, चमेली, कुञ्ज॥

ग्राम बालिका बालक गण ये
हिलमिल करते कथा अनेक।
क्या ही हँस हँस फूल तोड़ते
दौड़ दौड़ कर थके अनेक॥

(४)

पुष्प बाटिकाओं से लेकर
सौरभ शुचि शीतलता पुञ्ज।
चुम्बन करते कमल पूर्ण सर
सरिता, वन, गिरि, खेत, निकुञ्ज॥
मन्द मन्द बहता है सुखकर
वायु आयु वर्द्धक स्वच्छन्द
भर देता है मानव मन में
जो अतिही अपूर्व आनन्द॥

(५)

प्रातःकालिक शुभमय सुन्दर
पावन दृश्य शान्ति सुख मूल।
हरते हैं न कहो भाई किस
भव-तापित-जन-मन के शूल॥
तज आलस्य कर्म साधन में
निरत रहो नित प्रति सब लोग।
ईश्वर को दे धन्यवाद शुभ
करो प्रकृति शोभा उपभोग।

—पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय

अभ्यास

१—प्रातःकाल का दृश्य इस कविता और अपने अनुभव के आधार पर लिखो ।

२—प्रातःकाल तुमको क्या करना चाहिए, और सर्वसाधारण लोग क्या करते हैं ?

३—' कर्म-सूत्र-आबद्ध ', मे क्या समझते हो ?

८—रबड़

पाठशाला के छोटे छोटे लड़कों से लेकर बूढ़े तक रबड़ के नाम से अवश्य परिचित होंगे । पेंसल वा स्याही से लिखे हुए को मिटाने, बाइसिकिल, मोटरकार, घोड़ा गाड़ी के पहियों में लगाने, गेंद को उछलने योग्य बनाने, बरसाती पानी से बचने, मोजों को कसा रखने के लिये रबड़ का प्रयोग किसी न किसी रूप में बहुत से लोग करने लग गये हैं । वैज्ञानिक प्रयोगशालाओ में रबड़ का महत्व बढ़ा हुआ है । इसलिये रबड़ का का जीवन चरित्र प्रत्येक व्यक्ति को जानना उचित और आवश्यक समझना चाहिये ।

रबड़ कहाँ मिलता है

रबड़ कई प्रकार के वृक्षों के दूध से बनाया जाता है । यह दूध वायु में रहने से लचीला हो जाता है । इसके वृक्ष भारतवर्ष, अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका में पाये जाते हैं । कोई कोई

वृक्ष तीस से पचास फ़ीट तक ऊँचे होते हैं और कोई लता की जाति के होते हैं। लता जाति के अफ्रीका के कुछ भागों में पाये जाते हैं। आसाम, जावा, पेनांग और रंगून में जो रबड़ बनता है वह भारतीय रबड़ वृक्ष से निकलता है। दक्षिणी अमेरिका में रबड़ ऐसे पौधों से निकलता है, जो रेंड की जाति के होते हैं।

कैसे निकाला जाता है

सूखी ऋतु के आरम्भ में मनुष्य उन जंगलों में जाते हैं जिनमें रबड़ के पेड़ खड़े होते हैं और जिन वृक्षों का दूध रबड़ देने के योग्य समझा जाता है उनके चारों ओर मिट्टी के पक्के प्याले रख देते हैं। यह प्याले एक ओर चपटे होते हैं। ऐसे १५ प्यालों का रस मिला कर एक बोतल के बराबर होता है। मनुष्य दाहिने हाथ में कुल्हाड़ी लेकर जितनी ऊँचाई तक पहुँच सकता है गहरा और ऊपर की ओर ढालू होता हुआ एक ख़त तने में लगाता है; इससे छाल कट जाती है और लकड़ी में भी एक इंच के लगभग गहरा ख़त हो जाता है। इसकी चौड़ाई भी एक इञ्च होती है।

ख़त लग चुकने पर वह एक प्याला लेता है और गीली मिट्टी लगाकर उसको तने में ख़त के नीचे चिपका देता है। इसी प्याले में स्वच्छ दूध की नाईं रस भरने लगता है। चार पाँच इञ्च दूरी पर और उसी ऊँचाई पर दूसरा ख़त लगाया जाता है और उसके नीचे प्याला चिपका दिया जाता है। इसी प्रकार उसी ऊँचाई पर प्यालों की एक पंक्ति लगा दी जाती

यह ऊँचाई पृथ्वी से ६ फ़ीट के लगभग होती है। एक
से दूसरे पेड़ और दूसरे से तीसरे में इसी प्रकार खत लगाकर
ले चिपका दिये जाते हैं। इन खतों से तीन चार घण्टे तक
बहा करता है। यह निश्चित नहीं रहता कि किस खत से
तना दूध निकलेगा। हाँ, यदि पेड़ बड़ा हो और पहले बहुत
न लगाये गये हों तो बहुत से प्याले आधे भर जाते हैं
र कुछ पूरे भर जाते हैं।

दूसरे दिन फिर खत किये जाते हैं। पहले खतों की पाँति
दूसरे दिन के खतों की पाँति सात आठ इंच नीचे होती है।
प्रकार प्रतिदिन नये खतों की पाँति सात आठ इंच नीचे
होते पृथ्वी तक पहुँच जाती है, तब खत का लगाना बन्द
देते हैं। जो रस इन प्यालों में इकट्ठा होता है वह एक बड़े
न में उड़ेल लिया जाता है जिसको बटोरने वाला अपने
में लिये रहता है।

दूध को बाहर कैसे भेजते हैं

दूध एकत्र कर के ढाल देते हैं। साँचा लकड़ी की बड़ी करछी
तरह होता है। यह चपटा होता है जिसमें रबड़ तह की तह
पर एक जमाया जाता है। एक तंग मुँह वाले बर्तन में
का पेंदा खुला रहता है लकड़ी की आँच से बनाते हैं और
पर चिकनी मिट्टी रगड़ देते हैं जिससे दूध चिपकने नहीं
। तब उसको धुएँ में गरम करते हैं। कर्मचारी एक हाथ
ाँचे को थामता है और दूसरे हाथ से दो बार तीन प्यालों

का दूध उस पर उड़ेल देता है। तुरन्त ही वह साँचे को आग के बर्तन के मुँह पर रख कर शीघ्रता के साथ घुमाता है जिसमें धुआँ चारों ओर बराबर लगे। साँचे से दूसरी ओर भी ऐसा ही किया जाता है। धुआँ लगने पर दूध कुछ पीला और ठोस होता है। जब एक तह पर दूसरी तह और इसी तरह कई तह, जमा चुकते हैं तब तख़्ते पर ठोस होने के लिये रख देते हैं, ठोस होने पर साँचे के किनारों पर तराश देते हैं और साँचे को निकाल लेते हैं। इस प्रकार चार पाँच इंच मोटी तह हो जाती है। अच्छी तरह सूखने पर यह बाज़ार भेज दिया जाता है। ऐसी दशा में सब तहें साफ़ साफ़ दिखाई पड़ती हैं। साँचे को खुरचने से जो कुछ मिलता है और प्यालों में जो कुछ जमा रहता है वह भी इकट्ठा करके बाज़ार भेज दिया जाता है। इसको नीची श्रेणी का रबड़ कहते हैं।

शुद्ध कैसे किया जाता है

जंगलों में जमा कर जो रबड़ भेजा जाता है उनमें मिट्टी, बालू, पत्तियाँ इत्यादि मिली रहती हैं, इस लिये बिना शुद्ध किये यह काम का नहीं होता। इसलिये कई घण्टे तक इसको पानी में उबालते हैं। आग में इसको नहीं गलाते क्योंकि यह आग पकड़ लेता है। पानी में उबालने से रबड़ नरम पड़ जाता है। जो भाग नीचे बैठ जाता है उसको अलग कर देते हैं क्योंकि उसमें बालू, मिट्टी इत्यादि मिली होती है और जो उतराया रहता है उसमें पत्ती और खर मिले रहते हैं। तब इसको

मशीन द्वारा धोते हैं। इसके पश्चात् रबड़ को ऐसे कमरों में सुखाते हैं जिनको भाप के नलों द्वारा गरम रखा जाता है। सूर्य्य की किरणें नहीं पड़ने पातीं। इन किरणों से बचाने के लिये खिड़कियां पीली वा सफ़ेद रँग दी जाती हैं। सूखने पर रबड़ को बटोर कर रख देते हैं। धुले हुए रबड़ को मसलने वाली मशीन में रखा जाता है। बेलनों के घुमाने से रबड़ उनके बीच में दब कर छोटे छोटे छिद्रों में से होकर निकलता है। मसल चुकने पर रबड़ उस मशीन में रखा जाता है जहाँ साँचे में थक्का बँध जाता है। इन थक्कों को खूब दबा कर ऐसी जगह में रखते हैं जहाँ बर्फ़ से भी ज़्यादा ठंढक रखी जाती है। इससे थक्के कड़े पड़ जाते हैं और तब साँचे निकाल दिये जाते हैं। यह थक्के बर्फ़ में से तभी निकाले जाते हैं जब इनका काम पड़ता है। कुछ थक्के वर्गाकार और बेलनाकार होते हैं।

जब रबड़ की चद्दरों की आवश्यकता होती है तब यह थक्के भिन्न भिन्न मोटाई के काटे जाते हैं। काटते समय रबड़ को ठंढे पानी से लगातार भिगोते रहते हैं। काट चुकने पर चद्दरों को सूखने के लिये लटका देते हैं।

इन्हीं चद्दरों से रबड़ के फ़ीते काटे जाते हैं। यह फ़ीते कुछ दूर तक तान कर फैलाये जाते और इस समय इनको ठंढा ही रखते हैं। गरम पानी में रखने से यह अपने आकार के दृढ़ हो जाते हैं। यह रीति कई बार करने से फ़ीते की दृढ़ता पाँच वा छः गुना बढ़ायी जा सकती है।

यदि फीते बहुत पतले हों तो उनको रबड़ का सूत कहते हैं जो लचीले कपड़ों में लगता है।

रबड़ से कौन काम निकलते हैं

पेन्सिल के लिखे हुए अक्षर रबड़ से मिट जाते हैं। इससे इसका नाम अंगरेज़ी में रबड़ पड़ा जिसका अर्थ है घिसने वाला। यह कहा जा चुका है कि रूई, ऊनी और रेशमी मोज़ा और दस्तानों को लचीला करने के लिये इसके डोरे प्रयोग किये जाते हैं। रबड़ में गन्धक मिला दिया जाय तो नाम गन्धकी रबड़ पड़ जाता है जिससे स्याही के अक्षरों को मिटाने वाली लचीली पट्टियाँ, किवाड़ों की कमानी, गैस ले जाने वाली नलियाँ, गेंद इत्यादि बनते हैं। अलकतरे से मिलाकर कंघे, घड़ी की जंजीर, कलम और बहुत सी चीज़ें बनती हैं। जिससे यह सब चीज़ें बनती हैं उसे वल्कनाइट कहते हैं जो आबनूस की लकड़ी के रंग का होता है, परन्तु वास्तव में वह रबड़ और अलकतरे के योग से बनता है।

रबड़ को घोल कर लाख मिला देने से गोंद की नाईं जोड़ने का भी काम लिया जाता है जिसको नाव बनाने वाले बहुधा प्रयोग करते हैं। नफ़्था में घोल कर ऊनी कपड़ों पर फैला देने से ऊनी कपड़ों में पानी नहीं सोखता। ऐसे ही कपड़े बरसाती कपड़े कहे जाते हैं क्योंकि बरसात का पानी ऊपर ही ऊपर बह जाता है। विद्युत् समाचार पहुँचाने वाले तार भी इसमें लपेटे जाते हैं जिससे बिजली इधर उधर नहीं बहने पाती।

रबड़ के रासायनिक गुण

यह गरम या ठंडे पानी में नहीं घुलता, परन्तु ताड़पीन और नफ़्था में घुल जाता है। यह आग पकड़ लेता है जिसकी लौ से धुआँ बहुत होता है और गन्ध तीव्र होती है।

भौतिक गुण

इसका लचीलापन हलकी गरमी पहुँचाने से बढ़ जाता है। गरम गरम यह ताना जाय और तनाव के रहते हुए ठंढा किया जाय तो लचीलापन चला जाता है और रबड़ बना ही रह जाता है, गरम करने से फिर लचने लगता है। इसी गुण के कारण यह लचीले कपड़ों, गेंद और गैस की नलियों के बनाने में काम आता है।

गरम पानी में व आग के सामने रखने से यह मुलायम पड़ जाता है। बहुत तेज़ आँच पर पिघलने लगता है। ताजे कटे हुए किनारे तनिक सी गरमी और दबाव से जुड़ जाते हैं।

—महावीर प्रसाद

अभ्यास

१—रबड़ किस किस काम में आता है ?

२—रबड़ कहाँ मिलता है और कैसे निकाला जाता है ?

३—रबड़ के साफ़ करने का तरीक़ा बताओ।

४—रबड़ के रासायनिक गुण क्या हैं ?

६—कलदार कल्पतरु

भज कलदारं भज कलदारं कलदारं भज मूढ़मते।

खेलत बितै दई लरकाई
तरुण भये तरुणी मन भाई
बृद्ध वयस मति गति बौराई
विपति हर्नि सम्पति न कमाई—भज०

शिल्प-कला अभ्यास न भायो
व्यापारहि नहिं चित्त लगायो
हितू धनी कोउ काम न आयो
नाहक बातन जनम गँवायो—भज०

कोरी भक्ति अरु कोरा ज्ञाना
कोरा कविता शक्ति महाना
कोरे कण्ठ कुरान पुराना
बिना रुपैया नहिं सम्माना—भज०

केवल धनी सकल गुन आगर
सभा समिति मधि पूर्ण उजागर
चञ्चल चतुर चमत्कृत सुन्दर
मनु वसुन्धरा प्रकट पुरन्दर—भज०

जा हित जग नर पढ़ैं पढ़ावें
तान सुरीली चहुँ दिसि गावें
देश विदेश कुदक कर जावें
पै मन में सन्तोष न पावें—भज०

धन हित रूप कुरूप बनावै
धन हित तन में भस्म रमावैं
धन हित लम्बी जटा रखावैं
धन हित पीले बसन रँगावैं—भज०

ये ही सब के प्राण बचावैं
दारुण दुःख दारिद्र भगावे
ताकों तू क्यों नहिं अपनावे
रे मतिमन्द न लज्जा आवे—भज०

ये ही सुहृद बन्धु प्रिय चाकर
ये ही कर्म धर्म को आकर
याके बिन सब निपट अनारी
बात न पूँछे प्राण पियारी—भज०

ये ही उन्नति शिखर चढ़ावै
ये ही शान्ताकार बनावै
ये ही विपदा विकट नसावै
ये ही जग में पाँव पुजावै—भज०

तनय कहे यह पिता हमारा
सन्यो सनेह सकल परिवारा
जा बिन मित्रहु आँख चुरावै
सत्वर आनन निरखि दुरावै—भज०

जग अथाह रत्नाकर भारी
माया सीप समिति हिय हारी

परत स्वांति उत्साह अपारा
प्रगटहि मुक्ता—आविष्कारा—भज०

—सत्यनारायण कविरत्न

अभ्यास

१—रुपया महात्म्य अपनी भाषा में वर्णन करो।

२—रुपये में क्या क्या गुण हैं? और इससे क्या क्या काम निकलते हैं?

३—अन्तिम पद का भावार्थ बताओ।

४—धन के लिए आदमी क्या क्या कार्य करता है?

५—साबित करो कि धन सुखदायक नहीं वरन् दुःख और पाप उत्पन्न करने वाला है।

६—पुरन्दर, सत्वर और मुक्ता के अर्थ बताओ।

१०—कर्त्तव्य

जितने चेतन जीव हैं सभी के मन में प्रायः अपनी उन्नति करने की अभिलाषा होती रहती है। मेरी अभी क्या दशा है? किस तरह मैं इसको इससे अच्छी कर सकता हूँ, क्या करूँ जिससे मेरी यह दशा इससे अच्छी हो, इस तरह के विचारों का मन में आना ही एक तरह से चेतन जीवों का लक्षण माना गया है। इसी लक्षण के अनुसार सभी काल के, सभी देश के मनुष्य भी ऐसे ऐसे विचार करते आये हैं। जिस काल में

जिस देश वालों का यह विचार असली राह पर हुआ है उसी काल में उस देश की दशा अच्छी रही है । इतिहासों के देखने से यह बात मालूम पड़ती है कि जब जिस देश में हर एक स्त्री पुरुष अपने अपने कर्त्तव्यों ही के पालन में लगे रहे हैं उस देश की अवस्था अच्छी रही है । अर्थात् राजा प्रजा, माता पिता, युवा युवती, बालक बालिका, गुरु शिष्य इत्यादि अपने अपने काम को सन्तुष्ट चित्त से करते रहे हैं और कभी एक दूसरे के काम में दखल देने की चेष्टा नहीं करते रहें तब तक ईश्वर की अभीष्ट उन्नति परम्परा अनर्गल रूप से चली आई। प्रकृति की रीति भी ऐसी ही है । पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, अपने अपने नियमित कामों को करते हैं और कभी भी जल अग्नि का, अग्नि वायु का, या वायु आकाश का काम करने की चेष्टा नहीं करता । इसीसे प्रकृति का काम कभी नहीं बिगड़ता इसी तरह मनुष्य-मण्डली में जितने आदमी हैं उनको चाहिये कि अपने अपने नियमित कामों ही के करने में लगे रहें और असल में यदि आदमी पूरी तरह अपने कर्त्तव्यों का पालन करेगा तो उसको इधर उधर झाँकने का दूसरों के कामों में व्यर्थ हाथ डालने का अवसर ही कब मिलेगा।

आज कल हमारे देश में प्रायः सभी लोगों का चित्त पश्चिम के देशों के धन की झलक देख कर कुछ बिगड़ा सा मालूम पड़ता है । किसी न किसी प्रकार का सुख ही परम पुरुषार्थ है । शरीर के सुख से मन का सुख अपेक्षित है । यह प्रायः

सभी लोग मानेंगे। अब हम लोग बाहरी उन्नति की जगमगाहट में पड़ कर इस बात का विचार करना भूल जाते हैं कि मन का सुख अर्थात् चित्त-शान्ति क्या है और किस प्रकार मिल सकता है? बाहरी जगमगाहट से अन्धे न होकर यदि हम लोग पश्चिम के देशों की असल दशा को विचारेंगे तो साफ़ देख पड़ेगा कि धन की अनन्त वृद्धि होते हुए भी वहाँ के मनुष्य प्रसन्न नहीं हैं। धन ही धन की उन्नति समझने वाले प्रायः इस घटना को न समझ सकें। पर हम भारतवासियों के चित्त में तो यह बात खचित होनी चाहिये कि प्रसन्नता का कारण धन नहीं है। अपने कर्त्तव्य के सम्पन्न करने से जो सन्तोष मन में उत्पन्न होता है वही प्रसन्नता का कारण है। यदि धन ही प्रसन्नता का कारण होता तो यूरुप अमेरिका के सभी लोग प्रसन्न रहते। वहाँ के लोग प्रसन्न नहीं हैं उसका कारण यही है कि वहाँ के मनुष्य अपने ही कर्त्तव्य को अधिक समझ कर उसके पूर्ण करने का यत्न करें और उसके पूर्ण होने पर अपने को कृतार्थ समझें ऐसा नहीं करते किन्तु एक दूसरे के काम में दखल देने, दोष निकालने में सदैव लगे रहते हैं। ऐसे दखल देने और दोष निकालने का तो अन्त कभी हो ही नहीं सकता फिर सन्तोष और उसका फल प्रसन्नता कहाँ से हो।

इस देश के पुरुषों के चित्त में तो प्रायः अब पश्चिम का वायु इतना घुस गया है कि वे लोग प्रायः ऐसे विचारों को

"बुढ़िया की कहानी" कहेंगे। पर यहाँ की स्त्रियों के ऊपर अभी तक इस वायु ने अपना प्रभाव नहीं डाला है। अभी थोड़ा ही असर इनके ऊपर पड़ने लगा है। इससे यह अवसर इनके चेतने का है। यदि ये भी पश्चिम के झकोरे में पड़ कर अपने चिरोपार्जित प्रसन्नता के असल कारण को भूल जायँगी और अपने कर्त्तव्यों की ओर ध्यान न देकर यदि इधर उधर के कामों में अपने को लगावेंगी तो फिर इस देश में पुराने समय की तरह स्त्री पुरुष धन ही को सर्वस्व न जान कर सन्तोष ही को असल प्रसन्नता का कारण मान कर यथार्थ सुख से जीवन निर्वाह करेंगे इसकी आशा बिलकुल जाती रहेगी।

—गङ्गानाथ झा

अभ्यास

१—चेतन जीवों का लक्षण क्या है ?

२—किसी देश की दशा अच्छी कैसी होगी ?

३—क्या धन ही प्रसन्नता का कारण है ?

४—'कर्तव्य' किसे कहते हैं ? कर्त्तव्य पालन से क्या लाभ होता है ?

११—स्वदेश-प्रेम

सेवा में तेरी भारत तन मन लगायेंगे हम,
फिर स्वर्ग का सहोदर तुझको बनायेंगे हम।

तुझसे जने तुझी ने पालन किया हमारा,
उपकार जितने करता क्या क्या गिनायेंगे हम।
तेरे ऋणों का बोझा सर पर धरा हमारे,
करके प्रयत्न पूरा उसको चुकायेंगे हम।
तेरे लिये जियेंगे, तेरे लिए मरेंगे,
तेरी ही सेवा में यह जीवन बितायेंगे हम।
घनघोर दुःख घटा भी हम पर घिरी खड़ी हो,
क्षणमात्र भी न तुझको जी से भुलायेंगे हम।
तू स्वर्ग है हमारा, तू सौख्य गृह हमारा,
तुझसे ही नेह नाता अब तो लगायेंगे हम।
जब जब मरें, तुझी में तब तब सदा जनम लें,
मरने के वक्त ईश्वर से यह मनायेंगे हम।
गौरव गिरा है तेरा, दुःख ने है तुझ को घेरा,
दुःख में तेरे दुखी हो आँसू बहायेंगे हम।
प्यारे सुवन तिहारे फूट और मद के मारे,
बेहोश जो पड़े हैं उनको जगायेंगे हम।
परमेश! हाँ हमे अब पूरन पुनीत बल दो,
बिन आपके सहारे कुछ कर न पायेंगे हम।

—गङ्गानारायण द्विवेदी

अभ्यास

१—देश ने तुम्हारे साथ क्या क्या उपकार किये हैं ?

२—भारत की सेवा तुम किस प्रकार करोगे ?

१२—छापे की कल की कथा

जिन जिन कारणों से जगत में शिक्षा-प्रचार एवम् साहित्यिक उन्नति हुई है अथवा हो रही है उनमें मुद्रणकला का आविष्कार भी एक प्रधान कारण है। इसके द्वारा विद्या विज्ञान का सूक्ष्म रहस्य भी सर्वसाधारण के सम्मुख उपस्थित हो जाता है जिससे सभी मनुष्य सम्यक् रीत्यानुसार ज्ञानोपलब्ध कर सकते हैं। अति पुरातन काल में विद्या एक पुस्तक-विशेष में बँधी हुई रहती थी, जिसको प्राप्त करना दीन मनुष्यों के निमित्त असाध्य नहीं तो दुःसाध्य अवश्य था। गरीब ही क्यों धन-सम्पन्न मनुष्य भी उसे शायद ही प्राप्त करते थे; कारण उस समय में पुस्तकें हस्तलिखित होती थीं। एक साधारण पुस्तक के भी प्रकाशन में भी अधिक समय, व्यय एवम् युक्ति की आवश्यकता पड़ती थी। कोई पुरुष अपने आन्तरिक भाव को अनायास प्रकाश न कर सकता था। यही कारण था कि उस समय पुस्तकें बड़ी ही महँगी मिलती थीं। लोगों का कथन है कि पन्द्रहवीं शताब्दी के इङ्गलैण्ड में एक बाइबिल का मूल्य १००० पौंड से कम न था, जो कि आजकल भारत में लगभग आठ आने में मिलती है। पुस्तकों की महर्घता से कोई पुरुष यथावत् पढ़ लिख नहीं सकता था। देश में पुस्तकालय की संख्या तो नितान्त ही अल्प थी। यदि कहीं पुस्तकालय होता भी था तो वहाँ पुस्तकें १०० से अधिक नहीं मिलती थीं। बड़े बड़े कालेजों में तथा गिर्जाघरों में ही ऐसे दो चार पुस्तकालय पाये

जाते थे—साधारण जन समुदाय तो पुस्तकाध्ययन से सर्वथा वंचित रहता था। बड़े लोग भी पुस्तकों के लिये सदैव लालायित रहते थे। उन लोगों की इच्छा रहती थी कि किसी प्रकार शिक्षा का प्रचार हो—एक व्यक्ति का मनोगत भाव दूसरे पर प्रकट किया जाय—परन्तु उन लोगों को कोई यथावत् साधन नहीं उपलब्ध होता था, जिसके द्वारा वे अपने व्यापार में, अभिलषित कामों में कृतकार्यता प्राप्त करें। फलतः उन लोगों का मनोरथ कदापि पूर्ण नहीं होता था।

लोगों ने संसार में मुद्रण-कला का आविष्कार कर परोपकार एवम् कर्त्तव्य-परायणता का बड़ा ही परिचय दिया है। जगत् में इस अपूर्व कौशल के आविष्कारक लारेंस कास्टर साहिब महोदय हैं। आप हालैण्ड के रहने वाले थे। आप ही के प्रशंसनीय मस्तिष्क का यह परिणाम है कि आज समस्त सभ्य संसार, उन्नति रूपी ऐक्य के एक सूत्र में बँधा हुआ है।

बहुतों का यह अनुमान है कि उक्त कला का आविष्कारक जर्मनी वासी गुटम्बर्ग महाशय हैं। जो हो इन दोनों व्यक्तियों के मस्तिष्क सर्वथा सराहनीय एवम् पूज्य हैं।

वह आविष्कार किया हुआ कौशल शनैः शनैः अन्य योरोपीय देशों में भी बढ़ने लगा और जहाँ तहाँ उन्नति का प्रखर प्रकाश चमत्कारित होने लगा। पन्द्रहवीं शताब्दी में फ्राँस, यूरोप महादेश में बड़ा ही सभ्य गिना जाता था। वहाँ असंख्य विद्या-रसिक एवम् कला-कुशल व्यक्ति निवास करते थे जिनकी

निरन्तर अभिलाषा रहती थी कि संसार में विद्या-शिक्षा का यथा-वत् प्रचार हो—सभी सन्तान शिक्षित एवम् कार्य-दक्ष निकलें—उसी फ्रांस देश में एक बरगन्डी नामक प्रान्त है। उस प्रान्त का ड्यूक बड़ा ही विद्यानुरागी था। उसने एक बृहत् पुस्तकालय स्थापित करने का विचार किया। विद्या-शिक्षा प्रचार के उद्देश्य रखते हुए उसने लगभग २००० हस्तलिखित पुस्तकों का संग्रह एक स्थानीय पुस्तकालय में सम्पादन किया। उसने समस्त सभ्य संसार में यह घोषणा प्रकाश कर दी कि अच्छी पुस्तकों को यथा-वत् पुरस्कार दिया जावेगा।

उस समय इङ्गलैण्ड का बादशाह एडवर्ड चतुर्थ था जिसने इङ्गलैण्ड में सन् १४६१—१४८३ ई० तक शासन किया। एडवर्ड भी कम विद्या-रसिक नहीं था। अपने देश में वह सदा विद्या का प्रचार करता रहता था। बरगन्डी के ड्यूक ने उस इङ्गलैण्ड के शासक चतुर्थ एडवर्ड की बहन से ब्याह किया। इस नवीन सम्बन्ध के कारण फ्रांस में बहुतेरे अङ्गरेज़ जीवन व्यतीत करने लगे और यथासाध्य एडवर्ड की बहन को अन्यान्य शासन सम्बन्धी कार्यों में तन मन धन से सहायता करते थे।

उन्हीं अङ्गरेज़ों में से एक का नाम विलियम कैक्स्टन था। वह केन्ट से आया था और लण्डन में नौकरी करता था। बहुत दिनों तक उसने लण्डन में नौकरी कर के फिर फ्रांस के फ़्लैण्डर नगर को प्रस्थान किया। और वहाँ शनैः शनैः वह एक विस्तृत वाणिज्य मण्डली का प्रधान बन बैठा। ऐसी भारी

संस्था के अध्यक्ष होते हुए भी उसकी प्रवृत्ति पठन-पाठन की ओर अधिक रहती थी। समय पाने पर वह रात रात भर अध्ययन करता रहता था।

दिन में भी जब वह अपने कार्य्य से छुटकारा पाता था तो झट पुस्तकों को पढ़ने लगता था। साथ ही वह एक बड़ा सुयोग्य लेखक भी था। अच्छी अच्छी पुस्तकों की नकल करके साहित्य की यथावत् उन्नति करता था। विलियम कैक्स्टन महाशय की बहुत सी उत्तमोत्तम लिखित पुस्तकें बरगन्डी के ड्यूक की धर्म-पत्नी की सेवा में उपस्थित की गयीं; अतः उसने उत्तम लेखकों को पुरस्कार प्रदान करना निश्चय किया था। ड्यूक की अर्द्धाङ्गिनी महोदया तो ऐसी उत्तम पुस्तकों के अवलोकन मात्र से ही गद्‌गद् हो कर मुग्ध हो गयीं। पुस्तकों में बड़े गम्भीर भावों का समावेश था। उसने उन पुस्तकों के नकल करने के निमित्त कैक्स्टन साहब को सानुनय अनुरोध किया और उचित पुरस्कार प्रदान करने की आज्ञा भी दिलायी।

विलियम कैक्स्टन साहब ने अध्ययनार्थ एक रमणीक घर बरिजिज में पृथक् निर्धारित किया था। कैक्स्टन साहब रात दिन एकाग्रचित्त से वहीं पठन-पाठन में दत्तचित्त रहते थे। अच्छी शिक्षाप्रद पुस्तकों को लिखना ही उनका प्रधान कार्य था। अतः वे प्रतिदिन नियमित रूप से पुस्तक लिखा करते थे। एक दिन उनके ध्यान में एक ऐसी अद्‌भुत घटना आ उप-स्थित हुई कि उन्होंने उसी दिन से कलम से एक दम ही लिखना

बन्द कर दिया। किसी गिर्जाघर की एक छोटी कोठरी में एक व्यक्ति मि० मानशियन नामक रहा करता था। कैक्स्टन ने उससे एक दिन अकेले में मुलाकात की। मानशियन साहब के आगे एक अपूर्व यन्त्र रखा हुआ था जिसके सहारे से १०० आदमी के लिखने के बराबर काम छपता था। मानशियन साहब उसी यन्त्र द्वारा छाप रहे थे। कैक्स्टन साहब ने उस यन्त्र को देख कर बड़ा ही कौतूहल प्रकाश किया और उनके हृदय में वह अपूर्व यन्त्र अङ्कित हो गया। वे चुपचाप वहाँ से वापस चले आये।

इस अमोघ यन्त्र का निर्म्माता एक लुटेनबर्ग नामक पुरुष था। उसने बड़ी युक्ति के साथ काठ में अक्षरों की खुदाई की थी जिसमें रोशनाई भर दी जाती थी। उसी यन्त्र के द्वारा कागज़ों पर एक ही साँचे से हज़ारों ग्रन्थ मुद्रित हो जाते थे। उस यन्त्र की चर्चा चलने लगी। छापे का काम अब बड़ी सुगमता से चलने लगा। किसी बात की रुकावट अब न हुई।

विलियम कैक्स्टन ने उस उपयोगी यन्त्र को खरीदने के निमित्त बरगन्डी के ड्यूक की स्त्री से सादर प्रार्थना की।

डचेज़ ने भी उस यन्त्र के गुणों को सुन कर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और उसे उस यन्त्र को शीघ्र ही खरीद कर दिया। अब कैक्स्टन साहब सम्यक् प्रकार से उसी यन्त्र के सहारे लिखने लगे। उन्होंने वहाँ पर बड़ा ही नाम प्राप्त किया और एक भारी लेखक के नाम से विख्यात हुए।

जब उन्होंने इङ्गलैण्ड को प्रत्यागमन किया तो अपने साथ उस अपूर्व यन्त्र को भी लेते आये। इङ्गलैण्ड में इसका प्रचार सन् १७७६ ई० में हुआ। सब से पूर्व एक कहानी की पुस्तक अँगरेज़ी में मुद्रित की गयी। इङ्गलैण्ड के वेस्ट मिनिस्टर में आकर वे उस कल के सहारे कार्य सम्पादन करने लगे। एक बार चतुर्थ एडवर्ड ने जब उस यन्त्र की प्रशंसा सुनी तब वे अपने सहोदर भाई रिचर्ड के साथ देखने गये और बड़ा ही आनन्द प्राप्त किया।

कैक्स्टन ने अपने जीवन काल में कुल ६१ पुस्तकें उस यन्त्र द्वारा लिख डालीं। कैक्स्टन महाशय की मृत्यु के पश्चात् उस उपयोगी यन्त्र का सर्वत्र प्रचार होने लगा। यूरोप में इसकी ख्याति घर घर फैल गयी और लोग इससे बड़ा ही लाभ उठाने लगे। अनेकों समाचार-पत्रों की नींव डाली गयी। जिससे जगत् का बड़ा ही उपकार हो रहा है। भारतवर्ष में भी अब इस अमोघ यन्त्र ही के बल से असंख्य ग्रन्थ मुद्रित हो रहे हैं; और शिक्षा-सम्बन्धी बहुत कुछ उन्नति हो रही है। जिस कार्य को लोग महान् कठिन समझ बैठे थे, अब वही कार्य अनायास ही सुगम होता जा रहा है। परमेश्वर करें कि भारत में भी वैसे ही कर्मवीर नर-रत्नों का प्रादुर्भाव हो।

शंकरसहाय वर्मा एम० ए०, बी० एल

अभ्यास

१—जब छापे की कल नहीं थी तब सर्वसाधारण को पढ़ने में क्या कठिनाई होती थी, और लोगों का पढ़ना कैसे होता था?

२—अब छापाखानों के बढ़ने से पढ़ने में क्या सुभीता हो गया है ?

३—छापाखानों से क्या क्या लाभ हैं ? अच्छी तरह वर्णन करो।

४—छापे की कल का आविष्कार किसने और किस प्रकार किया ?

१३—ग्रामीण

(१)

सुअट्टालिका उच्च वासी सुजानों,
तनक आप नीचे उतर आइयेगा।
चलो संग मेरे किसी ग्राम में तुम,
निराली छटा इक वहाँ पाइयेगा॥

(२)

चढ़ा आज कल पूस का है महीना,
हवा बह रही है सदा शीत सानी।
नदी चल रही मन्द ही चाल से अब,
किनारे से हट कर गया दूर पानी॥

(३)

हरे खेत सर्वत्र हैं देख पड़ते,
जिसी ओर हम लोग आँखें घुमावें।
पड़े ओस-कन पत्तियों पै चमकते,
हरे वस्त्र पै मोतियों को बिछावें॥

(४)

कहीं शीत शीतार्त हो खेतवाला,
पड़ा झोपड़ी में पुत्राले बिछा के।
समय काटता पास धूनी जला के,
तथा जोर से तान ग्रामीण गा के॥

(५)

कहीं तीसियों के लसैं फूल नीले,
खड़े हो रहे खेत में झूम राई।
किसी ने मही पै मनो है बिछाई,
हरे पीत नीले पटों की रजाई॥

(६)

जुड़े गाँव के लोग चौपाल में हैं,
कथा हो रही मोद और प्रेम सानी।
कोई गा रहा गीत "रानी सरंगा",
कोई भूत की कह रहा है कहानी॥

(७)

"वहाँ गाँव में प्रेत है एक रहता,
बड़े वृक्ष पै थान अपना बना के।
निशा अर्द्ध में कीट को बीन खाता,
नदी तीर पै लुक भारी जला के॥"

(८)

कहीं पाठशाला बना गाँव का है,
गुरू बालकों को जहाँ है पढ़ाता।
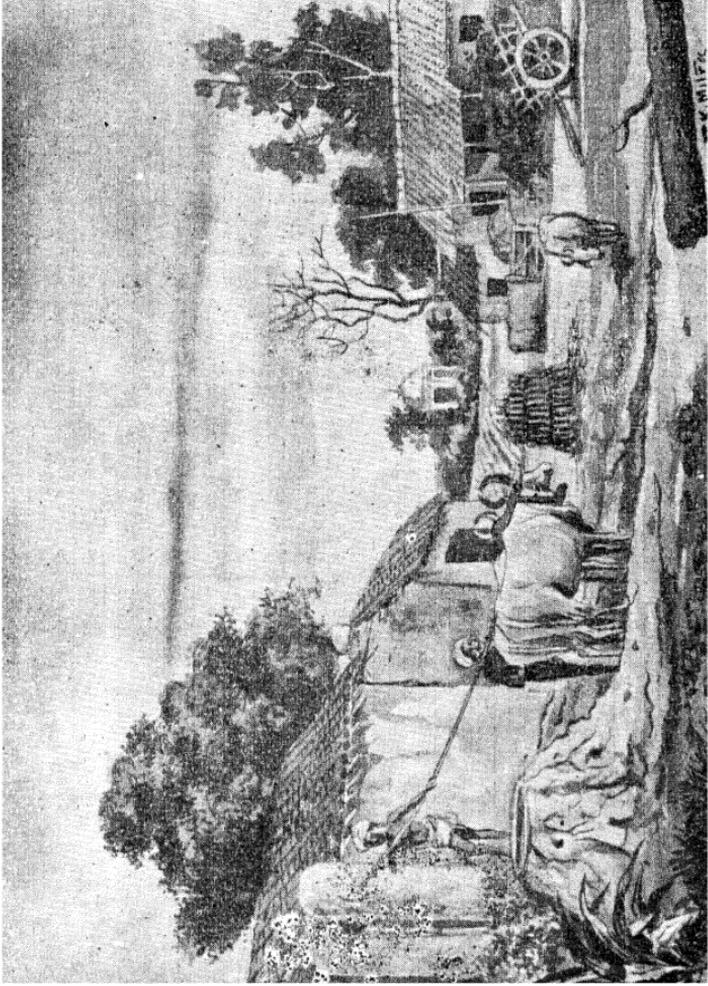
ग्राम-दृश्य

(४६)

गणित और भूगोल साहित्य हिन्दी,
यथा बात विज्ञान को कुछ सिखाता ॥

(६)

तथा पूजने को कहीं डाह काली,
चलीं गीत गातीं सभी गाँव-वाला।
इसी भाँति निर्दोष आनन्दकारी,
सभी ढंग ही है यहाँ का निराला ॥

—मन्नन द्विवेदी

अभ्यास

१—इस पाठ के ग्रामीण दृश्य का वर्णन पढ़ कर अपने गाँव के दृश्य का वर्णन करो।

२—शहर में रहने वाले विद्यार्थी अपने शहर का दृश्य वर्णन करें।

१४—विचित्र वृक्ष

ईश्वर की सृष्टि अति विचित्र है। वह बड़ा अद्भुत कारीगर है। उसकी कारीगरी देख कर स्तम्भित हो जाना होता है। आज हम कुछ विचित्र वृक्षों का वर्णन कर उसकी अद्भुत कारीगरी का परिचय देने का प्रयत्न करेंगे।

पेरिस में आजकल 'वंशी वृक्ष' का बड़ा प्रचार है। इसका लगाना फ़ैशन हो गया है। प्रत्येक प्रतिष्ठित जन के बाग़ में

यह वृक्ष अवश्य मिलेगा। यह प्रकृति की अद्‌भुत रचनाओं में से है। इस वृक्ष की पत्तियों में छोटे छोटे अनेक छिद्र होते हैं और उनके द्वारा हवा आने जाने से एक विचित्र प्रकार का स्वर उत्पन्न होता है। इसी से इसका नाम 'वंशी वृक्ष' पड़ा है। यह छिद्र एक कीड़े के द्वारा किये जाते हैं जो प्रत्येक 'वंशी वृक्ष' की पत्तियों पर अपना काम करने से नहीं चूकते।

केलिफ़ोर्निया 'क्रोधी वृक्ष' का जन्म-स्थान है। यह वृक्ष १० फ़ीट से २० फ़ीट तक ऊँचा होता है। जब कभी वायु उसकी शान्ति में विघ्न डालती है तब वह कुपित हो जाता है। वह अपना कोप पत्तियों की अद्‌भुत खड़खड़ाहट तथा सनसनाहट द्वारा प्रकट करता है और साथ ही विचित्र प्रकार की बू छोड़ता है जिससे वहाँ आसपास किसी मनुष्य का ठहरना कठिन हो जाता है।

जापान में 'ज्वालामुखी वृक्ष' पाया जाता है। सूर्य्यास्त के समय उसकी सबसे ऊँची शाखाओं से सफेद धुवें के बादल निकलते हैं। और वृक्ष धुवाँ तभी छोड़ता है जब उसकी अवस्था ६० वर्ष से ऊपर हो जाती है।

मेक्सिको एक उपयोगी वृक्ष का जन्मदाता है। इस वृक्ष का विशेष गुण यह है कि वह पथिक के लिये हर समय सुई और डोरा तैयार रखता है। वृक्ष की प्रत्येक पत्ती पर एक पतला सुईनुमा काँटा लगा होता है और उसको खींच लेने पर

उसके साथ दो फ़ीट का लम्बा तागा चला आता है। पथिक बख़ूबी उस प्राकृतिक सुई से अपना काम कर सकता है।

कोलम्बिया ने 'रोशनाई-वृक्ष' उत्पन्न कर रक्खा है। इस वृक्ष का लाल रस रोशनाई का काम भली भाँति देता है। इस रस से काग़ज़ पर लिखने के बाद अक्षर धीरे धीरे काले हो जाते हैं। इस रस में एक और विशेषता है। इसमें से लिखी हुई निबों में फिर मुरचा नहीं लगता है। चाहे फिर वे पानी में इस्तेमाल की जायँ।

अमेरिका के जंगलों में 'दिशा-सूचक-वृक्ष' का अनुसन्धान मिला है। जब पथिक अपनी राह भूल जाता है और उसे दिशाओं का ज्ञान नहीं रहता है, उस समय इस वृक्ष की उपयोगिता मालूम होती है। इसकी पत्तियों की नोकें ठीक उत्तर दक्षिण की ओर सदैव रहती हैं। यह वृक्ष ६, ७ फ़ीट से अधिक ऊँचा नहीं होता है। भटका हुआ पथिक इसके द्वारा फिर अपनी राह लगता है और ईश्वर को धन्यवाद देता है।

मेडागास्कर भी पथिकों के लिए उपयोगी वृक्ष का जन्मदाता है। यह वृक्ष भी बड़ा अद्भुत है। यह अपनी बड़ी बड़ी पत्तियों में, जो प्याले के समान होती हैं, पानी इकट्ठा रखता है। उस गर्म शुष्क देश में पथिकों को इससे बड़ी सहायता मिलती है। जब पथिक प्यास के मारे बेचैन हो जाता है और चारों ओर कहीं पानी का पता नहीं होता है, उस समय वह अपने भाले से पत्ती में छेद कर देता है और नीचे खड़ा होकर अपना बर्तन

टपकते हुए जल से भर लेता है। वह शीतल और स्वच्छ जल पीकर ईश्वर का गुणानुवाद करता हुआ अपनी राह लगता है। वृक्ष में प्रायः इस प्रकार की चार पत्तियाँ होती हैं।

जहाँ यह देश ऐसे उपयोगी वृक्ष का जन्मदाता है वहाँ उसने मनुष्यभक्षी वृक्ष भी उत्पन्न किया है। अभी तक छोटे छोटे कीड़ों के खाने वाले मांसभक्षी वृक्षों का पता था। पर हाल ही में इसका अनुसन्धान लगा है। उस देश के आदि-निवासी इसे पवित्र वृक्ष मानते हैं और उस पर बलि देते हैं। ज्योंही कोई मनुष्य इस वृक्ष पर पहुँचता है, त्योंही उसकी शाखाएँ सिमटने लगती है और मनुष्य को चारों ओर से दबा लेती हैं। उनमें अन्दर की ओर तेज काँटे लगे होते हैं और वह मनुष्य के शरीर में सैकड़ों की संख्या में छिद जाते हैं। दूसरे दिन उस मनुष्य का कहीं कुछ भी पता नहीं रहता है और शाखाएँ फिर निश्चेष्ट चारों ओर फैल जाती हैं।

हमारे देश में 'अग्नि-वृक्ष' उत्पन्न होता है। इसकी पत्तियाँ और डालों पर नुकीले काँटे बालों के समान होते हैं। छूने से वे गर्म लाल सुई की भाँति चुभते हैं और बड़ी पीड़ा उत्पन्न करते हैं। वह पीड़ा सारे शरीर में धीरे धीरे व्याप्त हो जाती है और चार पाँच घंटे तक बड़ा कष्ट रहता है।

बंगाल में दो वृक्ष ऐसे हैं जो संध्या तथा प्रातःकाल झुक कर पृथ्वी पर लेट जाते हैं और फिर खड़े हो जाते हैं।

पास ही एक मन्दिर है । उस मन्दिर की महिमा इन वृत्तों के कारण बहुत बढ़ गई है और वहाँ मेला लगने लगा है ।

अन्त में 'व्यङ्ग-वृत्त' का वर्णन कर हम इसे समाप्त करते हैं । इस वृत्त की पत्तियों पर विचित्र प्रकार की रेखाएँ अङ्कित होती हैं । जिनको ओर देखने से विदित होता है कि मानो किसी ने दर्शक का व्यङ्ग-चित्र खींचा हो । उन रेखाओं से अनेक प्रकार के अजीब मुँह बन जाते हैं ।

धरातल पर के यह कुछ अद्भुत वृत्त हैं । न जाने अभी कितने और एक से एक बढ़ कर विचित्र वृत्त हैं । धरातल का बहुत बड़ा भाग अभी अनुसन्धान के लिये वैसा ही पड़ा है । मनुष्य के लिये अभी वह अगम्य हो रहा है ।

वंशीधर मिश्र एम०ए०

अभ्यास

१—वंशी-वृत्त और रोशनाई-वृत्त का वर्णन करो ।

२—तुम्हारे गाँव या शहर में भी कुछ विचित्र वृत्त अवश्य हैं । सोचकर बताओ कि वे पौधे कौन हैं ? और उनमें क्या विचित्रता है ।

३—इस पाठ में पढ़े हुए वृत्तों में से तुम कौन से वृत्त चाहते हो कि वह तुम्हारे गाँव या शहर में भी होते तो अच्छा होता ?

१५–धनवान के प्रति

[१]

सम्पदा के तुम हो सम्राट।
दीनता का मैं हूँ सिरमौर॥
सदा भय के तुम रहते दास।
निडर मैं भेद भला क्या और?

[२]

तुम्हें है लक्ष्मी का अति मोह।
सदा मद मत्सर रहते साथ॥
न है मुझमें यह रंच प्रपंच।
साथ मेरे हैं दीनानाथ॥

[३]

चँवर करती है चिन्ता नित्य।
मुझे चिन्ता से है क्या काम?
करे कोई क्यों ईर्षा व्यर्थ?
कमाना नहीं मुझे है नाम॥

[४]

हुआ जो रूखा सूखा प्राप्त।
पेट भरकर उससे सविनोद॥
कहाँ वह शैय्या में आनन्द?
जिसे देती है भू की गोद॥

[५]

सखी है मेरी प्रकृति पुनीत।
उसी का करता हूँ सम्मान॥
प्रेम है रसिक राज के साथ।
उन्हीं का करता हूँ गुणगान॥

—पद्मकान्त मालवीय

अभ्यास

१—धनवान और साधारण बुद्धिमान में क्या अन्तर है?

२—तुम धनी होना अच्छा समझते हो या साधारण ज्ञानी पुरुष?

१६—बेतार का तार

रेल के स्टेशन पर गाड़ी आने से पहले तार-बाबू के घर में, टिक—टिक—टिक—टिक शब्द तुमने अवश्य सुना होगा। तार-बाबू अपनी उँगली से तार की कल को धीरे धीरे दबाते हैं, उससे टिक—टिक शब्द सुनाई पड़ता है। उस टिक, टिक शब्द से एक प्रकार का कम्पन पैदा होता है; जो बिजली के बल से, तार द्वारा दूसरे स्टेशन पर पहुँचता है। वहाँ के तार-बाबू जब तार की कल को उँगली से दबाते हैं, ठीक वैसा ही टिक, टिक शब्द उसमें से निकलने लगता है। इस टिक, टिक शब्द को समझने के लिये, एक खास शब्द-कोष होता है उसी के आधार पर पिछले स्टेशन के तार-बाबू की बात यहाँ के तार-बाबू समझ जाते हैं और उसके अनुसार कार्रवाई करते हैं।

इस प्रकार तार द्वारा एक जगह से दूसरी जगह ख़बर भेजना अचरज भरा काम है। किन्तु यह सुन कर तुम्हें अचरज होगा कि अब तो बिना तार के ही जहाँ तहाँ समाचार भेजे जाते हैं। उसमें तार की ज़रूरत बिल्कुल नहीं पड़ती। ज़रूरत होती है केवल तार देने और तार प्राप्त करने की दो मशीनों की। तार टूट जाने पर, तार द्वारा ख़बरें भेजना असम्भव हो जाता है, किन्तु बेतार के तार में ऐसी कोई झंझट नहीं होती है।

इस बेतार की कल के आविष्कर्त्ता हैं—इटली के मार्कनि साहब। सन् १९०७ ईसवी में उन्होंने इसका आविष्कार किया था। इसके पहले ही हमारे देश के आचार्य सर जगदीश चन्द्र बसु बेतार के तार की बहुत सी बातों का आविष्कार कर चुके थे। किन्तु देश विदेश में बेतार की कल बनाने का यश मार्कनि साहब को ही है। एटलांटिक महासागर के तीर पर परीक्षा के लिये एक स्टेशन तैयार कर पाँच वर्ष तक वह लगातार चेष्टा करते रहे। अंत में दूर दूर देश में वह सहज ही समाचार भेजने में सफल हो सके। मार्कनि साहब के इस आविष्कार को देख कर संसार चकित हो गया। भिन्न भिन्न देशों के विद्वानों ने उनकी अभ्यर्थना की उन्हें अनेकानेक उपाधियाँ दीं। यही नहीं भिन्न भिन्न देशों के नरपतियों के मुकुट इस आविष्कार को अपने राज्य में प्रचलित कराने के लिये उनके चरणों पर झुक पड़े। मार्कनि साहब को करोड़ों रुपये

बतार क तार क आविष्कता माकंना

मिले। आज कल संसार के सभी सभ्य देशों में बेतार की कलें हैं। भारत में भी उसके कई स्टेशन हैं।

एक देश से दूसरे देश में समाचार भेजने के लिए समुद्र के नीचे होकर बड़ी कठिनाई से तार लगाये जाते हैं। फलतः जो जहाज समुद्र होकर जाते हैं कठिन विपत्ति आने पर भी वे उस तार से सहायता नहीं ले सकते। किन्तु जिस जहाज पर बेतार का तार होता है; वह विपद् की आशंका होते ही चारों तरफ़ खबरें भेज देता है और उसी क्षण चारों ओर से अन्य जहाज पहुँच कर उसकी सहायता करते हैं। इस प्रकार कितने हज़ार मनुष्य, कितने करोड़ रुपया इसकी सहायता से डूबने से बचे हैं, गिनती नहीं। सचमुच इस युग के आविष्कारों में यह सर्व-श्रेष्ट है।

आजकल सभी देशों में बेतार के तार के खम्भे देख पड़ते हैं। खम्भे खूब ऊँचे रहते हैं क्योंकि वे जितने ऊँचे रहेंगे उतनी अधिक दूर तक वे समाचार भेज सकेंगे। इंगलैण्ड में समुद्र के तट पर २७५ हाथ ऊँचा बेतार के तार का खम्भा है। उस खम्भे के माथे पर दो सौ घोड़े को ताक़त वाली बिजली की कल लगी है। इस स्थान से जल अथवा थल होकर तीन हज़ार मील तक खबरें पहुँचाई जा सकती हैं।

कहोगे बिना तार के किस प्रकार खबरें यत्र-तत्र भेजी जाती हैं? हवा में "ईथर" नाम का एक पदार्थ है वह हवा से भी अधिक पतला होता है। सरोवर के जल में ढेला फेंकने पर

जिस प्रकार गोलाकार तरंगे उठती हैं, ईथर में जोर से शब्द करने पर उसी प्रकार की तरंगें पैदा की जाती हैं; जिन्हें दूर पर लगी बेतार के तार की कल खींच लेती है। "रेडियम" नामक पदार्थ से इस प्रकार की तरंगें और भी जल्दी जल्दी उठने लगती हैं।

बेतार के तार भेजने वाले जिस घर में बैठ कर काम करते हैं, वह इस प्रकार बन्द रहता है कि उसके भीतर कोई शब्द नहीं पहुँच सकता है। वहीं से बैठ कर भेजने वाले चारों तरफ़ खबरें भेजते हैं।

बेतार के स्टेशन तैयार करने में बहुत खर्च पड़ता है। इंगलैंड के दो स्टेशनों के बनाने में, प्रत्येक के लिए, लगभग दो करोड़ रुपये खर्च हुए थे।

अब तो बेतार के तार से चित्र भी भेजे जाते हैं।

विज्ञान की महिमा अपरम्पार है।

"बालक" से उद्धृत

अभ्यास

१—अभ्यर्थना, उपाधि, नरपति, प्रचलित, आशंका, सरोवर के अर्थ बताओ।

२—"विज्ञान की महिमा अपरम्पार है" इसके अर्थ बताओ और इसमें विज्ञान, महिमा व्याकरण से क्या है?

३—बेतार के तार से समाचार कैसे भेजे जाते हैं?

४—हिन्दोस्तान में बेतार के तार-स्टेशन कहाँ कहाँ हैं?

१७—सच्चा-मित्र

१

सिराक्यूज़ एक देश मनोहर अतिशय सुखदायक था।
'डायोनियस' भूप वहाँ का दुष्ट दुःखदायक था॥
बुद्धिमान डामन जो था सज्जन सुधीर वर ज्ञानी।
उसको प्राणदण्ड आज्ञा दे की उसने मनमानी॥

२

डामन का परिवार सिन्धु के पार दूर रहता था।
पत्नी पुत्रों से मिलने को मन उसका चहता था॥
राजा से आज्ञा माँगी, उसने यह शर्त लगाई।
देकर हमें ज़मानत अपनी जा सकते घर भाई॥

३

यदि तुम नियत दिवस पर घर से वापस यहाँ न आये।
तो ज़ामिन उस दिवस जायँगे फाँसी पर लटकाये॥
कौन ज़मानत देकर उसकी जोखिम-प्राण उठाता।
कौन दूसरे का हित करके अपने प्राण गँवाता॥

४

किन्तु जगत में ऐसे भी कुछ होते पावन प्रानी।
जिनकी अमर कथा की गाई जाती सदा कहानी॥
सत्य-प्रेम पर बलि होने को उद्यत जो रहते हैं।
हँसते हँसते मरने ही को जो जीना कहते हैं॥

५

डामन का था मित्र एक पिथियस ऐसा ही प्रानी।
उसने सारी कथा मित्र की किसी मनुज से जानी॥
वह प्रसन्नमुख शान्त भाव से नृप के सम्मुख आया।
डामन के ज़ामिन होने का निज मन्तव्य सुनाया॥

६

राजाज्ञा से डामन बन्दीगृह से गया निकाला।
उसी समय पिथियस प्रेमी-नर गया जेल में डाला॥
फाँसी का दिन आ पहुँचा पर डामन अभी न आया।
पिथियस था आनन्दमग्न कैसा शुभ अवसर पाया॥

७

हे जगदीश्वर और कुछ समय मेरा मित्र न आवे।
मैं फाँसी पर चढ़ जाऊँ डामन प्यारा बच जावे।
आख़िर को फाँसी चढ़ने का नियत समय जब आया।
तब पिथियस ऊँचे मचान पर लाकर गया चढ़ाया॥

८

चढ़कर भी उस उच्च मंच पर उसका हृदय न डोला।
जनता को संबोधित कर वह वीर वचन यों बोला॥
कई दिनों से चलती है प्रतिकूल वायु दुखदायी।
आने में मेरे सुमित्र को जिसने देर लगाई॥

९

केवल एक यही कारण है जिससे मित्र न आया।
है निर्दोष विचारा बिलकुल यह सब को समझाया॥

कल से है अनुकूल वायु बस वह आता ही होगा।
पल पल एक उसे बरसों सा हाय बीतता होगा ॥

१०

जल्लादों से कहा वीर ने अब न विलम्ब लगाओ।
मैं सहर्ष तैयार खड़ा हूँ फाँसी मुझे चढ़ाओ ॥
उसी समय यह शब्द घोर सब के कानों में आया।
ठहरो ! ठहरो !! जरा मित्रवर मैं आया मैं आया ॥

११

चकित चक्षुओं ने यह देखा घोड़ा तेज़ भगाता।
क्लान्त पसीने से तर डामन बदहवास सा आता ॥
आकर कूद पड़ा घोड़े से चढ़ा मंच पर जाकर।
पिथियस से सप्रेम यों बोला अपने गले लगाकर ॥

१२

धन्य धन्य है जगदीश्वर को जिसने तुम्हें बचाया।
निज कर्तव्य धर्म पालन को मुझे यहाँ पहुँचाया ॥
पिथियस बोला हाय ! दो मिनट बाद क्यों न तुम आये।
देख दृश्य यह सब लोगों के नैन नीर भरि आये ॥

१३

पाहन हृदय नृपति ने देखी जब यह अद्‌भुत लीला।
द्रवित हो गया हृदय दया से बोला वचन लजीला ॥
मैं ऐसी अनूप जोड़ी को खण्डित नहीं करूँगा।
इनका ही सा सहृदय जन बस मैं भी आज बनूँगा ॥

—गङ्गानारायण द्विवेदी

अभ्यास

१—इस कहानी को अपनी भाषा में लिखो।

२—इस कहानी से तुम क्या उपदेश ग्रहण करोगे?

३—कठोर राजा के हृदय में सहृदयता कैसे आई? इसे समझाओ।

४—सच्चे मित्र में क्या गुण होने चाहिये? सच्चे मित्र की अन्य कथा यदि जानते हो तो बताओ।

५—'हँसते हँसते मरने' का भावार्थ क्या है? हँसते हँसते मरने वाले का कोई उदाहरण दो।

१८—माता का स्नेह

वात्सल्य रस की शुद्ध मूर्ति माता के सहज स्नेह की तुलना इस जगत में, जहाँ केवल अपना स्वार्थ ही प्रधान है, कहीं ढूँढ़ने से भी न मिलेगी। दादी, दादा, चाचा, ताऊ, आदि का स्नेह मर्यादा परिपालन के ध्यान से देखा जाता है; किन्तु माता पिता का स्नेह पुत्र में निरे वात्सल्य भाव के मूल पर है। अब इन दोनों में विशेष आदरणीय सच्चा और निःस्वार्थ प्रेम किसका है इसकी समालोचना इस लेख का मुख्य उद्देश्य है। बहुतों की अनुमति है कि लाड़ प्यार से लड़के बिगड़ जाते हैं, पर सूक्ष्म विचार से देखा जाय तो बालकों में अच्छी अच्छी बातों का अंकुर गुप्त रीति पर प्यार ही से जमता है। विलायत के एक विद्वान ने लिखा है कि मेरी माँ के बार बार चुम्बन ने मुझे चित्रकारी में प्रवीण कर दिया। गुरु

जितना पाठशाला में भय और ताड़ना दिखला कर वर्षों में सिखला सकता है उतना अपने घर में वह माँ के अकृत्रिम सहज स्नेह से एक दिन में सीख लेते हैं। माँ के स्वाभाविक सच्चे और अकृत्रिम प्रेम का प्रमाण इससे बढ़ कर और क्या मिल सकता है कि लड़का कितना ही रोता अथवा मुरझाया हुआ हो, माँ की गोद में जाते ही चुप हो जाता है और जहाँ थोड़ी देर तक लड़के ने दूध न पिया माँ के स्तन भर आते हैं, दूध टपकने लगता है और वह विकल हो जाती है। दस मास तक गर्भ में धारण करने का क्लेश, जनने के समय की पीड़ा, उसके पालन पोषण की चिन्ता, उसे नीरोग और प्रसन्न देख कर चित्त का हुलास, रोगी तथा अनमन देख अत्यन्त विकल होना इत्यादि सब माता ही में पाया जाता है। लड़का कुपूत और निकम्मा निकल जाय तो बाप उसका साथ नहीं देता, वह उसे घर से निकाल अलग कर देता है, पर माँ बहुधा पति को भी त्याग निकम्मे पुत्र का साथ देती है। दो चार नहीं वरन् हज़ार पाँच सौ ऐसी माँ देखी गई हैं जिन्होंने बालक की अत्यन्त कोमल अवस्था ही में पिता के न रहने पर चक्की पीस पीस कर अपने पुत्र को पाला और उसे पढ़ा लिखा कर सब भाँति समर्थ और योग्य कर दिया। पुत्र भी ऐसे सुयोग्य हुए हैं कि सब भाँति भरे पूरे घरानों में भी न निकलेंगे। महाकवि श्रीहर्ष के पिता ने जब ये केवल पाँच ही वर्ष के थे, बाद में पराजित हो कर लाज से अपना तन त्याग दिया तो इनकी माँ ने चिन्तामणि मन्त्र का इनसे जप करवा कर सरस्वती देवी

का कृपापात्र बना इन्हें बड़ा भारी पंडित बना दिया और पीछे से अपने पति के परास्त करने वाले पंडितों को बाद में हराकर पूरा बदला चुकवाया। पुराणों में ऐसी अनेक कथाएँ मिलती हैं जिनमें माता का वात्सल्य टपक रहा है। माता का एक बार का प्रोत्साहन पुत्र के लिए जैसा उपकारी और उसके चित्त में प्रभाव उत्पन्न करने वाला होता है, वैसो पिता की सौ बार की शिक्षा और ताड़ना भी नहीं। सौतेली माँ सुरुचि के वज्रपात सदृश वाक्प्रहार से ताड़ित और पिता की अवज्ञा और निरादर से अत्यन्त संतापित ध्रुव को—जब यह केवल पाँच ही वर्ष के बालक थे—माता का एक बार का प्रोत्साहन ध्रुव पदवी की प्राप्ति का हेतु हुआ; जिसके समान उच्च और स्थिर पद आज तक किसी को मिला ही नहीं। पिता का स्नेह बहुधा बदला चुकाने की इच्छा से होता है। वह पुत्र को इसीलिये पालता पोसता और पढ़ाता लिखाता है कि बुढ़ापे में वह हमारे काम आवेगा; जब हम सब भाँति अपाहिज और अपंग हो जायँगे तो हमारी सेवा करेगा और हमारे अन्न वस्त्र की चिन्ता रक्खेगा। पर माँ का उदार और अकृत्रिम प्रेम इन सब बातों की कभी इच्छा नहीं रखता। माँ अपनी प्रिय संतान के लिए कितना कष्ट सहती है; जिसको स्मरण कर चित्त में वात्सल्य भाव का उद्रेक हो आता है। माता के स्नेह में पिता के समान प्रत्युपकार की वासना भी नहीं है। दया मानो देह धरे सामने आकर खड़ी हो जाती है। टूटी फूस की झोंपड़ी में जब मूसलाधार पानी बरस रहा है, फूँस का ठाठ सब ओर

से ऐसा टपकता है कि कहीं तिल भर भी जगह नहीं बची है, कंगाली के कारण न इतना कपड़ा-लत्ता पास है कि आप ओढ़े और प्रिय संतान को ढाँप कर वृष्टि से बचावे, ऐसे समय में आधी धोती ओढ़े आधी से अपने दुध-मुँहे बालक को ढाँपे माता उसको छाती से लगाये हुए है। अपने प्राण और देह की तनिक भी चिन्ता नहीं है, किन्तु वात और वृष्टि से पुत्र का कोई अनिष्ट न हो, इसलिए वह अत्यन्त व्यग्र हो रही है। पुत्र की रोगी और अस्वस्थ दशा में पलंग के पास उदास बैठी मन मारे उसका मुँह ताक रही है। रात को नींद दिन का भोजन दुस्तर हो गया है। भाँति भाँति की मिन्नतें मानती है जो कोई कुछ कहता है वह सब कुछ करती जाती है। अपनी जान तक चाहे चली जाय पर पुत्र को स्वास्थ्य-लाभ हो। पिता को अपने शरीर पर इतना कष्ट उठाना कभी न आवेगा। यह माता ही है जो पुत्र के स्वाभाविक स्नेह के वश हो इतने इतने दुख सहती है। बुद्धिमानों ने इन्हीं सब बातों को सोच-विचार कर लिख दिया है कि पिता से माँ का गौरव सौ गुना अधिक है। माँ का केवल गौरव मान बैठ रहना कैसा ? हम तो कहेंगे कि पुत्र जन्म भर तन, मन, धन से माँ की सेवा करे तो भी उससे उऋण नहीं हो सकता। भाई बहिन में, भाई भाई में या बहिन में, परस्पर स्नेह का बन्धन और बहुधा समान शील का होना, माँ ही के दूध का परिणाम है। एक ही माँ का दूध सब पीते हैं इसलिए वे इतने प्रेमबद्ध रहते हैं। रहस्य-लीला में गोपियों ने भगवान् से

तीन प्रश्न किये जिनमें उन्होंने तीन तरह के प्रेम का मार्ग दिखाया है । एक तो वे, जो प्रेम करने पर प्रेम करते हैं, दूसरे वे, जो उनसे चाहो प्रेम करो या न करो, तुमसे प्रेम करते हैं, तीसरे वे जो ऐसे दुष्ट हैं कि उनसे कितना ही प्रेम करो तो भी नहीं पसीजते । इसके उत्तर में भगवान् ने कहा है कि जो परस्पर प्रेम करते हैं वह तो एक प्रकार का बदला है, स्वच्छ स्नेह उसे न कहेंगे । काम पड़ने पर मित्र शत्रु बना ही करते हैं, उनमें सौहार्द धर्म मूल नहीं हैं, किन्तु दोनों परस्पर स्वार्थी हुए तो कुछ न कुछ कपट उसमें अवश्य ही रहेगा । मन में कपट का लेश भी आया कि स्वच्छ स्नेह की जड़ कट गई । केवल धर्म ही धर्म और स्नेह को दर्पण के समान प्रकाश कर देने वाला जिसमें बदला पाने की कहीं गंध भी नहीं वह स्नेह वही है जो दया की साक्षात् स्वरूप माँ पुत्र से रखती हैं ।

—बालकृष्ण भट्ट

अभ्यास

१—माता के प्रेम में तुमको क्या विशेषता दिखाई देती है ? पिता से माता का गौरव सौ गुना क्यों है ?

२—उदाहरण देकर समझाओ कि पुत्र की माता ही सर्वश्रेष्ठ शिक्षक है ।

३—इस पाठ को पढ़ कर माता के साथ तुम अपना क्या कर्त्तव्य निश्चित करोगे ?

४—वात्सल्य, प्रोत्साहन और उद्रेक शब्दों के अर्थ बताओ।

५—माता के प्रेम पर एक लेख लिखो।

१६—सुख-दुःख

सुख दुःख दोनों जगतीतल में,
काल-गंग के तट अभिराम।
भाग्य-पवन जिस ओर बहाती,
जीवन-नौका आठों याम॥
या जीवन-पथ पर विराम थल,
न्याय-तुला या प्रभु के पास।
जीव हेतु यह झूला है जो,
भरता रहता श्वास उसास॥
सुख में तम है, दुःख में सत है,
दुख अन्वेषक, सुख है अन्ध।
सुख-प्रवृत्ति है, दुःख निवृत्ति है,
दुख स्वतंत्र, सुख में परिबन्ध॥
दुख में विनय विवेक सदा पर,
सुख उच्छृङ्खलता का नाम।
दुख सन्तोष-सदन, पर सुख तो,
नित अतृप्त तृष्णा का धाम॥
दुख का सहन सिखाता हमको,
साहस धैर्य शान्ति का पाठ।

सुख में निरा निरंकुशतामय,
है प्रमाद आलस का ठाठ ॥
दुख के अन्धकार में हरि की,
हास्य तड़ित की ज्योति अपार ।
सुख की चकाचौंध के कारण,
सदा तमोमय है संसार ॥

दुख विश्वास मेघ बरसाता,
हृदय-गगन में करुणा-धार ।
सुख सन्तप्त श्वास तो केवल,
धर्म चिता का धूम्र अपार ॥
विरह दुखाग्नि प्रेम-कंचन में,
करती कलित कान्ति का स्राव ।
सुख में नित नूतन सनेह का,
रहता है सर्वथा अभाव ॥

दुख-निशि के तम पूर्ण गर्भ में,
वास प्रभात उषा का गुप्त ।
सुख-रवि द्युति नक्षत्र रूप में,
खंड खंड होती निशि लुप्त ॥

सुख दुखान्त है दुख सुखान्त है,
सुख दुख रूप सकल संसार ।
सुख रण-करखे का कोलाहल,
दुख करुणा की मृदु गुंजार ॥

सुख दुख क्रम से सभी भोगते,
तो दुख की सब चिन्ता व्यर्थ।
जग जंजाल जाल में सुख की,
खोज हाय रे बड़ा अनर्थ!

—भवानीशङ्कर याज्ञिक एम० बी० बी० एस०

अभ्यास

१—सुख और दुःख में क्या अन्तर है?

२—तुम सुख अच्छा समझते हो या दुःख?

३—सुख में आदमी की क्या दशा होती है और दुःख में क्या?

४—तम और सत् को साफ़ साफ़ समझाओ।

५—न्याय-तुला, उच्छृङ्खलता और चकाचौंध शब्दों के भावार्थ बताओ और इनका प्रयोग अपनी भाषा में करो।

२०—कपड़े की आत्म-कहानी

हमारी कहानी बड़ी विचित्र है। हमने इतने ऊँच-नीच देखे हैं, जितने शायद ही किसी ने देखे हों। हमारा जन्म रूई से हुआ है। आदमी अपने स्वार्थ के लिए हमारी माता रूई की बड़ी दुर्दशा करते हैं। परन्तु जब उसके आत्म-त्याग से सुन्दर सुन्दर वस्त्र तैयार होकर मनुष्यों के उपयोग में आते हैं, तो उसके सन्तोष का ठिकाना नहीं। रूई हम भाइयों की माँ है। कुछ भाई रेशम, टसर और ऊन के भी बेटे हैं। माँ के कष्ट सहने

पर भी यदि बेटा परोपकार करे, तो माँ को उससे सन्तोष क्यों न होगा ?

जब हम माँ के पेट में—अर्थात् रूई के खेत में हरी-भरी जगह में—लहलहा रहे थे, तो हम फूले न समाते थे। हमारे ही जैसे हज़ारों भाई हमारे चारों ओर थे। अपने स्वजातियों को देख देख कर कौन हर्षित नहीं होता ? दुर्भाग्य से हरियाली सूखने लगी। सिर पर तेज सूरज चमकने लगे। इस तपस्या में भी हमें सन्तोष था। एक दिन १०—१२ बरस का बालक मेरे पास आया। आते ही हमारे रूप-रंग पर वह हँसा, और दूसरे ही क्षण हमें पौदे से अलग कर उसने हमारे अन्य मृतप्राय भाइयों के साथ मिला दिया। उस समय हमारे दुःख का ठिकाना न था, पर उपाय ही क्या था ?

अपनी जन्मभूमि छोड़ने पर हमें मालूम हुआ कि हम एक किसान की सम्पत्ति हैं। एक दिन बड़े-बड़े बोरों में भर कर, बैलों की गाड़ी पर लाद कर, न जाने वह हमें कहाँ ले चला ? सूरज निकलते-निकलते हम एक गाँव में पहुँचे। वैसी ही सैकड़ों गाड़ियाँ वहाँ खड़ी थीं। थोड़ी देर में सैकड़ों आदमी वहाँ इकट्ठे हो गये। वे आपस में इस बुरी तरह चिल्ला रहे थे कि हम तो डर गये। ३—४ घण्टे में झगड़ा समाप्त हुआ तब हम एक व्यापारी की शरण में पहुँचे। एक चीज़ में एक तरफ़ हम लटकाये गये, दूसरी तरफ़ लोहे के टुकड़े रखे गये। वहाँ हमारे और भी भाई पहले से थे। उनसे पूँछने
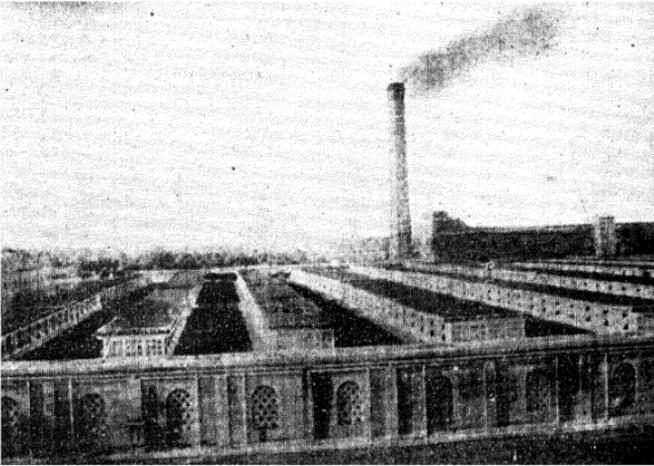
कपड़े का मील

पर मालूम हुआ, यह 'काँटा' है और यहाँ हमारा वज़न हो रहा है।

अब हम जिस नई जगह में पहुँचे वह बड़ी भयानक थी। सैकड़ों आदमी दौड़ धूप कर रहे थे। एक बड़े से मकान से ऐसी कर्कश आवाज़ आ रही थी कि हम तो बहरे से हो गये। हम कुछ सोच ही रहे थे कि इतने में न जाने कहाँ से बरसात आ पड़ी। ऊपर आँख उठा कर देखा तो वे बादल न थे, जो खेतों में दिखाई देते थे। यहाँ तो वही दो हाथ दो पैर वाला आदमी एक लम्बो सी नाली से पानी उछाल कर हमें भिगो रहा था। हम ठिठुरे जा रहे थे। अभी तो न जाने कितने कष्टों का सामना करना था।

दो दिन के बाद हमें एक ऐसे यन्त्र का सामना करना पड़ा, जिसकी बेदर्दी देख कर हम घबरा गये। हमारे जितने बिनौले बीज थे, सब हमसे अलग किये जाने लगे। इस आफ़त का सामना कर लेने पर तो हमें मृत्यु का ही सामना करना पड़ा। एक लोहे के लम्बे से कुएँ में हम भरे जाने लगे। मज़दूरों की लात खाते-खाते हम हैरान हो गये। उसके बाद एक लोहे का भारी वज़न ऊपर से हमें दबाने लगा। हमारे तो प्राण सूख गये हम जो फूले-फूले फिर रहे थे, पिचक गये। लोहे की पत्तियों से बाँध कर हम क़ैदी बना दिये गये। अब हमें लोग रुई की गाँठ कहने लगे।

इसके बाद हमारी लम्बी यात्रा शुरू हुई। एक लम्बो सी

गाड़ी में हम सब भर दिये गये। जंगलों, पहाड़ों और नदियों की हवा खाते हम न जाने किधर दौड़े जा रहे थे। एक दिन हमने अपने-आपको एक विशाल नगरी में पाया। सोचा थोड़े से आदमियों ने ही मिल कर हमारी यह दुर्दशा कर डाली, तो यहाँ के ये लाखों आदमी न जाने हमारा क्या करें। खैर राम-राम करते हम एक बड़े से घर में पहुँचे।

पीछे से मालूम हुआ कि इस नगरी का नाम बम्बई है, और यही हमारी बिक्री का सबसे बड़ा स्थान है। हम भावी सुख-दुःख की आशा-निराशा में बैठे ही थे कि अकस्मात् हमें उन लोहे के बन्धनों से मुक्ति मिल गई। एक आदमी हमारा गला पकड़ कर एक सुन्दर से मकान में ले गया। बढ़िया काग़ज़ में सजा कर हम रख दिये गये। कई आदमी रोज आते और हमारे दर्शन कर अपना अहोभाग्य समझते। हम बड़े खुश होते पर एक दिन हमें वहाँ से भी उठना पड़ा। मकान बहुत बड़ा था, चारों ओर हमारा ही राज्य था हम जिस आदमी के साथ जा रहे थे उसके हाथ से छूट कर कई दिनों तक उस मकान के आगन में लोगों के पैरों की ठोकरें खाते रहे। सौभाग्य से इतने में ही एक लड़का आया। उसने हमें अपनी टोकरी में उठा लिया। उस समय हमें खेत का वही दृश्य याद आ गया, जिसमें एक लड़के के द्वारा हम चुन लिये गये थे। इस बार हम धूल मे भर गये थे; इसलिए हमें बहुत लज्जित होना पड़ा।
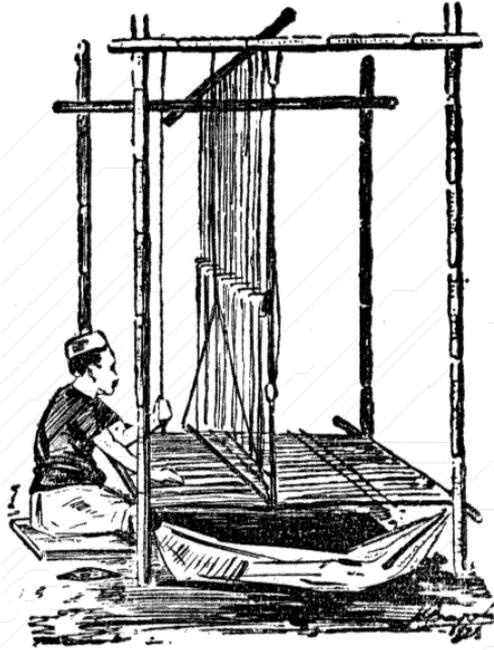
देशी करघा

यहाँ से हमारा नवीन जीवन आरम्भ हुआ। अपने उन भाइयों से हम अलग हो गये। अब हम थोड़े से धूलि-धूसरित भाई एक गरीब के हाथ बेच दिये गये। हमारे हजारों गाँठ वहाँ रोज बिकती थीं—न जाने कहाँ जाती थीं ; किन्तु हमें तो फिर एक गरीब की कुटिया देखने का ही सौभाग्य प्राप्त हुआ। बम्बई से फिर एक देहात में पहुँचे।

किसान ने बड़े प्रेम से हमारी धूल निकाल के हमें धुना। धुनने में हमें कष्ट तो हुआ, पर फूले न समाये। हमारा शरीर फूल-फूल कर चौगुना हो गया। उसके बाद हमें सूत का रूप दिया गया। एक औरत बड़े प्रेम से चरखे को चलाती और मधुर-मधुर गीत गाती हुई सूत कातती। सूत तैयार हो जाने पर कपड़ा बुना गया। जुलाहा हमको लेकर बाजार में गया। हमारा नाम खादी पड़ा। हम बेच दिये गये।

हमारा खरीदार एक मध्य-स्थिति का आदमी था। उसने उस खादी का एक कुर्ता बनवाया। गर्मी, धूप और शीत से हम सब भाई मिलकर उसकी रक्षा करते। एक दिन अकस्मात् हमारी भेंट उन भाइयों से हो गई, जिन्हें हम बम्बई में छोड़ आये थे। उनका नया रङ्ग-रूप देख कर तो हम दंग रह गये। हम खादी के कुर्ते के रूप में थे और वे एक बढ़िया विलायती कपड़े के कोट के रूप में आकर हमारे ऊपर लद गये। हम दोनों की बातें होने लगीं। हमने अपनी कहानी पूरी कर दी, तो उसने भी अपनी कहानी इस प्रकार सुनाई—

बम्बई से हम लोग जहाज पर सवार हुए। कई दिन तक समुद्र को हवा खाते-खाते हम विलायत—सात समुद्र पार—पहुँचे। उस जगह का नाम 'मैंनचेस्टर' था। वहाँ बड़े-बड़े कल कारखाने थे। मशीनों में हम कूटे-पीसे गये—धुने गये, मशीनों में ही काते गये और उसके बाद कपड़ा बन कर फिर अपने देश को लौट आये।

हमने कई महीनों इस रूप में बिताये। अन्त में हम बूढ़े हो गए। जगह-जगह झुर्रियाँ पड़ गईं। अब हम फटा-पुराना चिथड़ा बन गये। पर इस रूप में भी हमारा उपयोग कम न हुआ। हम भी अपने उन विदेशी भाइयों की भाँति मशीनों के फेर में जा पड़े। कई दिनों तक पानी में पड़े सड़ते रहे। उसके बाद कूट-पीट कर मशीन पर चढ़े। अब हम काग़ज बन गये, और आज इस पुस्तक के रूप में तुम्हारे हाथ में आ पहुँचे हैं। अब आगे हमारी क्या गति होती है, सो देखी जायगी! तुममें से कुछ तो हमें सजा कर आलमारियों में रख देंगे और कुछ तो न जाने क्या क्या कर डालेंगे। उसकी कष्ट-कल्पना हम अभी से क्यों करें।

—श्री गोपाल नेवटिया

अभ्यास

१—ऊँच नीच देखना, फूले न समाये, इन मुहावरों को अपनी भाषा में प्रयोग करो।

२—कपड़ा कैसे बनता है ? तुम कौन सा कपड़ा पसंद करते हो ?

३—तुम अपने लोटे या गिलास की आत्म-कहानी लिखो ।

४—विलायत में कहाँ और तुम्हारे देश में कहाँ कहाँ कपड़ा बनता है ?

२१—मेरी मातृ-भूमि

(१)

पावन परम जहाँ की, मंजुल महात्म्य धारा ।
पहले ही पहले देखा, जिसने प्रभात प्यारा ।।
सुरलोक से भी अनुपम, ऋषियों ने जिसको गाया ।
देवेश को जहाँ पर, अवतार लेना भाया ॥
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी ॥

(२)

ऊँचा ललाट जिसका, हिमगिरि चमक रहा है ।
सुवरन कीरीट जिस पर, आदित्य रख रहा है ॥
साक्षात् शिव की मूरत, जो सब प्रकार उज्वल ।
बहता है जिसके सिर पर, गंगा की नीर निरमल ॥
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी ॥

(३)

सर्वोपकार जिसके जीवन का व्रत रहा है ।
प्रकृती पुनीत जिसकी निरभय मृदुल महा है ॥

जहँ शान्ति अपना करतब करना न चूकती थी।
कोमल कलाप कोकिल कमनीय कूकती थी॥
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी॥

(४)

वर वीरता का वैभव, छाया जहाँ घना था।
छिटका हुआ जहाँ पर विद्या का चाँदना था॥
पूरी हुई सदा से जहँ धर्म की पिपासा।
सत्संस्कृत पियारी जहँ की थी मातृ-भाषा॥
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी॥

—सत्यनारायण कविरत्न

अभ्यास

१—तुम अपनी मातृभूमि का सुन्दर वर्णन करो कि वह कैसी है?
२—चौथे पद्य को उदाहरण देकर समझाओ।
३—'साक्षात् शिव की मूरत' से क्या समझते हो? साबित करो कि मातृभूमि शिव की साक्षात् मूर्ति है।
४—मंजुल, आदित्य और कलाप के अर्थ बताओ और यह भी बतलाओ कि ये व्याकरण से क्या हैं?

२२—शकुन्तला

बच्चो, तुम महाभरत की कथा सुन चुके हो। उसमें कौरवों और पाण्डवों के युद्ध का वृत्तान्त बड़े विस्तार से लिखा गया है। प्रसंग वश इस वृत्तान्त के अतिरिक्त उसमें और भी कितनी

ही मनोहर कथाओं का समावेश है, जिन्हें पढ़ने से उस समय का बहुत कुछ हाल हमें मालूम होता है। इन्हीं कथाओं में शकुन्तला की भी कथा है। कवि-कुल श्रेष्ठ कालिदास ने उसी कथा के आधार पर एक अत्यन्त सुन्दर नाटक लिखा है जो संस्कृत-साहित्य का अमूल्य रत्न है। संस्कृत ही क्यों, संसार के किसी भी साहित्य में उसके जोड़ के नाटक शायद ही मिलेंगे। संसार के बड़े-बड़े कवि उसे पढ़ कर मुग्ध हो जाते हैं। प्रायः सभी भाषाओं में उसका अनुवाद हो गया है। आज हम तुम्हें वही कथा सुनाते हैं।

प्राचीन काल में कण्व नाम के एक ऋषि थे। अन्य ऋषियों की भाँति उनकी कुटी भी एक तपोवन में थी। वह कन्द-मूल खाते थे, झरनों का पानी पीते थे और एकान्त में तपस्या करते थे। एक दिन वह जलाशय की ओर स्नान करने जा रहे थे कि किसी नवजात शिशु के रोने की आवाज़ उनके कानों में आई। आश्चर्य हुआ कि इस तपोवन में बालक कहाँ से आ गया। आस-पास कोई घर न था। लगे इधर-उधर देखने। सहसा एक झाड़ी में एक बालिका नज़र आई। कण्व मुनि उसकी मोहनी सूरत देख कर मोहित हो गये। तुरन्त गोद में उठा लिया और घर लाकर उसका पालन पोषण करने लगे। उनकी कुटी में गौतमी नाम की एक तपस्विनी रहती थी। उसका मातृ-हृदय उस शिशु को पाकर गद्‌गद् हो उठा। कण्व और गौतमी दोनों ही उसे अपनी ही कन्या समझते थे। बालिका भी गौतमी को अपनी माता और कण्व को पिता समझती थी। संस्कृत

में शकुनि पक्षी को कहते हैं। उस झाड़ी में पक्षियों ने ही बालिका की रक्षा की, इस लिये उसका नाम शकुन्तला रक्खा गया।

शकुन्तला प्रकृति की गोद में पलने लगी। तपोवन में दो ऋषि-कन्याएँ और भी थीं—अनुसूया और प्रियंवदा। तीनों सहेलियाँ एक साथ खेला करतीं। यहाँ पहाड़ियाँ थीं, झरने थे, हिरनों के झुण्ड थे, मोर थे। तीनों सहेलियाँ पहाड़ियों पर दौड़तीं, झरनों में जल-केलि करतीं, हिरनों से खेलतीं, और मोरों का नृत्य देखती थीं। हँसने खेलने में दिन गुजरते जाते थे। यहाँ तक कि शकुन्तला अबोध बालिका से परम सुन्दरी युवती हो गई।

एक दिन महाराज दुष्यन्त अहेर खेलते-खेलते तपोवन में आ निकले। तीनों सहेलियाँ उस समय झरनों के जल लाकर पौधों को सींच रही थीं। दुष्यन्त ने शकुन्तला को देख लिया। मन में निश्चय किया, इस रमणी से अवश्व विवाह करूँगा। शकुन्तला को भी राजा से विवाह करने की इच्छा हो गई। दोनों ने गान्धर्व विवाह कर लिया। लेकिन दो ही चार दिनों में राजा को कार्यवश राजधानी को लौटना पड़ा। चलते समय उन्होंने शकुन्तला को निशानी के तौर पर अपनी अँगूठी दी और बोले—प्रिये, तुम ज़रा भी मत घबराना, मैं यहाँ से जाते ही जाते तुम्हारे लिये सवारी भेजूँगा और मेरे आदमी तुम्हें उसी आदर-सम्मान से ले जायँगे जैसे दुष्यन्त की रानी को ले जाना चाहिये। शकुन्तला रोने लगी, पर यह समझ कर कि

। चार दिनों में तो राजा से भेंट हो ही जायगी, उसने धैर्य
ारण किया। राजा भी अपने आँसुओं को न रोक सके।

राजा के विदा हो जाने पर शकुन्तला को एक-एक पल
क-एक युग हो गया। अकेली मन मारे, उदास बैठी रहती।
भी विकल होकर रोने लगती। इस शोक में अगर कुछ ढाढ़स
ालता था तो उसी अँगूठी से। सहेलियाँ समझातीं, पर उसे
न न आता। राजा के दर्शन कब होंगे, बस, उसे यही धुन लगी
हती थी।

एक दिन शकुन्तला इसी शोकावस्था में बैठी थी कि दुर्वासा
ृषि आ पहुँचे। उन महात्मा को अपने तपोबल का इतना
भिमान था कि ज़रा-ज़रा सी बात पर शाप दे देते थे। देवता
क उनके शापों से डरते थे। दुर्भाग्य-वश शकुन्तला की नज़र
न पर न पड़ी। उन्होंने एक बार उसे पुकारा भी, पर वह
पनी चिन्ताओं में इतनी तन्मय हो रही थी कि उसे दुर्वासा
शब्द भी न सुनाई दिये। वह ज्यों का त्यों मूर्ति की भाँति
ड़ी रह गई। फिर उनका यथोचित आदर-सत्कार कौन करता।
ला, दुर्वासा ऋषि इस घोर अपराध को कैसे क्षमा कर देते।
मा तो उन्होंने सीखी ही न थी। उन्हें भ्रम हुआ कि शकुन्तला
जान बूझकर मेरा अपमान किया है। क्रोधित होकर बोले—
ऋषि कन्या होकर तूने मेरा इतना अपमान किया है, यह
े लिये असह्य है। मैं तुझे शाप देता हूँ कि जिस मनुष्य की
न्ता में तू बैठी है वह आज से तुझे भूल जायगा।"

यह प्रचण्ड शाप भी शकुन्तला के कानों तक न पहुँचा, लेकिन उसकी दोनों सहेलियों ने उसे सुना और भय से काँप उठीं। दोनों दौड़ कर ऋषि दुर्वासा के चरणों पर गिर पड़ीं और बड़ी नम्रता से बोलीं—भगवन्, उस वियोगिनी को क्षमा कीजिये। जब से राजा दुष्यन्त विदा हुए हैं, उसकी यही दशा है। न कुछ खाती है, न पीती है, न बोलती-चालती है। इस कठोर शाप से तो उसके जीवन का अन्त ही हो जायगा। उसका अपराध क्षमा कीजिये।"

जब दोनों युवतियों ने बहुत अनुनय-विनय की तब मुनि जी का क्रोध कुछ शान्त हुआ; बोले—"शाप का फल अवश्य होगा ही। हाँ, जब शकुन्तला राजा को उनकी दी हुई अँगूठी दिखा देगी तब उनकी विस्मृति भंग हो जायगी। इसी भाँति शाप का विमोचन होगा।"

दुर्वासा के चले जाने पर दोनों युवतियाँ शकुन्तला के पास आकर फिर उसे सान्त्वना देने लगीं। दुर्वासा के अभिशाप और क्षमा का समाचार उससे न कहा, क्योंकि इससे उसको और भी दुःख होता।

दिन बीतने लगे। राजा दुष्यन्त के यहाँ से न कोई पत्र आया, न कोई संदेश। शाप के फल से उनको शकुन्तला की याद ही न रही। वह दुखिया रो-रो कर घुली जाती थी, उधर दुष्यन्त राज्य के सुख भोग रहे थे।

कुछ दिनों के बाद कण्व मुनि तीर्थ-यात्रा करके लौटे। उन्हें जब ज्ञात हुआ कि शकुन्तला का विवाह राजा दुष्यन्त से

हो गया है तब बहुत प्रसन्न हुए और बोले—"दुष्यन्त बड़े प्रतापी राजा हैं। शकुन्तला का पुत्र भी प्रतापी राजा होगा और भारत पर राज्य करेगा।"

लेकिन जब कई महीने बीत गये और राजा दुष्यन्त के पास से कोई आदमी न आया तब कण्व मुनि ने शकुन्तला को स्वयं राजा के पास भेजने का निश्चय किया। उन्हें दुर्वासा के शाप का हाल मालूम न था। समझा, राज-काज में व्यस्त रहने के कारण दुष्यन्त को इतना अवकाश न मिला होगा कि शकुन्तला को बुलाने की तैयारी करते, किन्तु पति के घर बिना बुलाये जाने में भी कोई लज्जा नहीं है।

शकुन्तला की विदाई की तैयारियाँ होने लगीं। कण्व मुनि के दो शिष्य और गौतमी उसके साथ चले। तपोवन के पशु-पक्षियों से बिदा होते समय शकुन्तला का हृदय विदीर्ण हुआ जाता था। जिन हिरनों के बच्चों को उसने गोद में खेलाया था, जिन पौधों को उसने अपने हाथों सींचा था, जिन बेलों को उसने अपने हाथों चढ़ाया था, उन पर वह बार-बार ममतापूर्ण दृष्टि डालती थी। दोनों सहेलियों के गले लग कर वह इतना रोई कि उसे मूर्छा आ गई। फिर वह कण्व मुनि के पैरों से लिपट गई और उन्हें अश्रु-जल से धो दिया, मुनि ने उसे आशीर्वाद देकर बिदा किया।

राजधानी वहाँ से कई दिनों की राह थी। शकुन्तला को पैदल चलने का अभ्यास न था, इसलिये उन लोगों को छोटी छोटी मंजिलें करनी पड़ती थीं। एक दिन मार्ग में एक नदी

मिली उसमें स्नान करते समय राजा की अँगूठी उसकी उँगली से निकल कर पानी में गिर पड़ी। शकुन्तला को उसके गिरने की उस समय खबर न हुई। स्नान करके चारों आदमी फिर चल पड़े और कई दिनों के बाद राजधानी में जा पहुँचे। राजा दुष्यन्त पर तो दुर्वासा मुनि का शाप था। जब द्वारपाल ने शकुन्तला के आने की सूचना दी, वह चकित होकर बोले— " शकुन्तला ! कौन शकुन्तला ? मैं तो उसे नहीं जानता !! "

द्वारपाल ने विनय की—" महाराज, उसके साथ दो ऋषिकुमार हैं। वे कहते हैं कि शकुन्तला से महाराज का विवाह हुआ है।"

दुष्यन्त बाहर निकल आये, किन्तु शकुन्तला को देखने पर भी वह उसे न पहचान सके। शकुन्तला समझती थी कि राजा केवल निष्ठुरता के कारण यह लीला कर रहे हैं। उसने उन्हें तपोवन की याद दिलाई। अनुसूया और प्रियंवदा की चर्चा की, जल-तट का वर्णन किया, जहाँ बैठे हुए वे जल-पक्षियों की क्रीडा देखते थे, मृग-शावकों का स्मरण कराया, जिन्हें गोद में लेकर वे खिलाते थे; पर राजा की स्मृति जागृत न हुई। अन्त में शकुन्तला को क्रोध आ गया। बोली—" यह मैं कभी नहीं मान सकती कि आप मुझे पहचान नहीं रहे हैं। दस-पाँच वर्ष की बात नहीं अभी कुछ महीनों की बात है। क्या राज-सिंहासन पर बैठने से स्मृति भी नष्ट हो जाती है? मैं न जानती थी कि आप केवल क्षणिक मनोरंजन के लिये मुझ से

प्रेम कर रहे हैं। मुझे न मालूम था कि आप जैसा सत्यवादी वीर पुरुष इतना निर्दय, इतना अभिमानी और इतना स्वार्थी होगा। अगर आपको कुछ नहीं याद है तो इस अँगूठी को तो आप मिथ्या नहीं कह सकते, जो आपने चलते समय मुझे चिह्न-स्वरूप दी थी। देखिये! यह किसकी अँगूठी है?"

राजा ने तत्परता के साथ कहा—"हाँ वह अँगूठी मुझे दिखा दो।"

शकुन्तला ने उँगली से अँगूठी निकालनी चाही, पर अँगूठी का कहीं पता न था। उसने घबरा कर उँगली को देखा। अँगूठी वहाँ नहीं थी। नैराश्य, लज्जा और दुःख से उसका सिर झुक गया और उसकी आँखों से आँसू की बूँदें झरने लगीं। कुछ समझ में न आया कि अँगूठी कहाँ गई।

राजा ने कहा—"कहाँ है अँगूठी देखूँ?"

शकुन्तला ने लज्जित होकर कहा—"अँगूठी न जाने कहाँ गिर गई। विधाता ही मेरा शत्रु है, इसके सिवा और क्या कहूँ। मैं आपको दोष नहीं देती, यह सब मेरे पूर्व कर्मों का फल है, नहीं तो क्या मेरी उँगली से अँगूठी निकल जाती। इतना अपमान, इतनी अधोगति हो जाने पर भी मैं जीवित हूँ, इसका आश्चर्य है! क्यों मेरा हृदय विदीर्ण नहीं हो जाता, क्यों मुझे भूमि नहीं निगल जाती?

यह कहती हुई शकुन्तला अपने साथियों के साथ राज-भवन से निकली।

सहसा प्रांगण एक उज्ज्वल प्रकाश से आलोकित हो गया। लोगों को आँखें झपक गईं। जब फिर आँखें खुलीं, शकुन्तला एक अप्सरा की गोद में बैठी हुई आकाश की ओर उड़ी जा रही थी। सारी राज-सभा चकित हो गई।

राजा दुष्यन्त ने उपहास के भाव से कहा—"मैं तो उसे देखते ही समझ गया था कि महाराज इन्द्र की कोई माया है। मेरी सत्यवादिता को भ्रष्ट करने के लिये यह कुचक्र रचा गया था। ईश्वर ने मेरी रक्षा की, नहीं तो कहीं का न रहता।"

कई दिन के उपरान्त एक दिन शहर के कोतवाल ने आकर राजा को दण्डवत् की और एक बहुमूल्य अँगूठी उनके सामने रख दी। अँगूठी पर राजा दुष्यन्त का नाम खुदा हुआ था।

अँगूठी पर नजर पड़ते ही राजा की आँखों के सामने से परदा सा हट गया। तुरन्त शकुन्तला की याद आ गई। तपोवन का सारा दृश्य सारी प्रेम-लीला आँखों में फिर गई। समझा कदाचित् शकुन्तला ने यह अँगूठी भेजी है। उत्सुक होकर पूँछा—"क्या देवी शकुन्तला ने तुम्हें यह अँगूठी दी है?"

कोतवाल ने कहा—"नहीं महाराज, आज बाज़ार में एक मछुआ यह अँगूठी बेच रहा था। सर्राफों ने महाराज का नाम देख उसे पकड़ कर मेरे पास भेज दिया। अँगूठी तो महाराज की ही है, पर मछुआ कहता है, उसे यह एक मछली के पेट में मिली। उसे, जो आज्ञा हो, वह दण्ड दिया जाय।"

राजा ने लम्बी साँस खींचकर कहा—"उसे छोड़ दो, वह निरपराध है" और ग्लानि तथा दुःख से विकल होकर वह अपने को धिक्कारने लगे—"हाय! मैंने उस देवी का अपमान करके निकाल दिया। आई हुई लक्ष्मी को द्वार पर से दुत्कार दिया। क्यों मेरी स्मृति इतनी मन्द, इतनी शिथिल हो गई थी। अवश्य मुझ पर किसी देवता का शाप था, नहीं तो क्या मुझे अपनी प्राणेश्वरी शकुन्तला की याद भी न आती!"

राजा दुष्यन्त को मनोवेदना का पारावार न था। हँसना-बोलना तो दूर रहा, राज-सभा में भी बहुत कम आते। नित्य शकुन्तला की याद में तड़पा करते। उसे खोजने के लिये चारों दिशाओं में दूत भेजे, पर कहीं पता न पाया। सारे दूत अपना सा मुँह लेकर लौट आये। यहाँ तक कि कई साल गुज़र गये।

एक दिन राजा दुष्यन्त शोक में मग्न बैठे हुए थे कि इन्द्र ने उन्हें बुलावा भेजा। राजा वस्त्र पहने और इन्द्रलोक को चल पड़े। वहाँ इन्द्र के भवन के समीप उन्होंने एक छोटे से बालक को सिंह के बच्चे के साथ खेलते देखा। वह बच्चे को गोद में लिये खेल रहा था कि इतने में सिंहनी आगई और बालक पर झपटी। उस वीर बालक ने छड़ियों से मार मार कर सिंहनी को भगा दिया। राजा दुष्यन्त उस बालक का साहस और पराक्रम देखकर दंग रह गये। मन में आया, कहीं यह मेरा पुत्र होता तो क्या बात थी! सवारी रोक कर बालक से पूछा—"क्यों बेटा! तुम्हारा नाम क्या है और तुम किसके बेटे

हो ?" बालक ने निःशंक भाव से उत्तर दिया—"मेरा नाम भरत है। मैं महाराज दुष्यन्त का पुत्र हूँ।"

राजा को ऐसा आनन्द हुआ मानो अन्धे को आँखें मिल गई हों। हर्ष के आवेग में दौड़कर बालक को गोद में उठा लिया और पूछा—"तुम्हारी माता कहाँ हैं, बेटा ?"

बालक ने कहा—"माता जी घर पर हैं।"

राजा बालक के साथ उसके घर गये और शकुन्तला को देखते ही दौड़कर उसे हृदय से लगा लिया। शकुन्तला उनके चरणों पर गिर पड़ी। आज इतने दिनों के बाद उनके दुःखों का अन्त हुआ। इन्द्र ने अपने विमान पर बिठा कर उन लोगों को विदा किया।

राजा दुष्यन्त ने बहुत दिनों तक सुखपूर्वक राज्य किया। उनके बाद भरत राजगद्दी पर बैठा। वह इतना प्रतापी हुआ कि उसी के नाम पर ये देश आज तक भारतवर्ष कहलाता है।

अभ्यास

१—शकुन्तला की कथा किस ग्रंथ से ली गई है ? जिससे ली गई है उसकी एक कथा तुम भी सुनाओ।

२—शकुन्तला-कथा पढ़ कर तुम किस किस बात पर बहुत प्रसन्न हुए ?

३—तुम्हारे देश का नाम भारत क्यों पड़ा ?

४—शकुन्तला को राजा क्यों भूल गया, फिर उसको शकुन्तला कैसे मिली ?

२३—वियना की सड़क

ेयुत पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी एम० ए०, एल० टी० ने (जब वे
ड में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे) उन्हीं दिनों सितम्बर सन् १६२६ में
रलैण्ड के जिनेवा नगर से आस्ट्रिया की राजधानी वियना की यात्रा
। इस यात्रा में विशेषता यह थी की यह साइकिल द्वारा की गई
ेनेवा से वियना लगभग ६२५ मील है। उसी यात्रा का वर्णन इस
ना की सड़क" कविता में दिया गया है।

(१)

वियना की सड़क
वियना की सड़क
पर्वत पर चक्कर खाती हुई
जङ्गल की छटा दिखाती हुई
घाटी की सैर कराती हुई
खेतों में भी लहराती हुई
नद नाले पार कराती हुई
झरनों की तान सुनाती हुई
अठलाती हुई, बल खाती हुई
नागिन की चाल दिखाती हुई
ऊँची नीची, पत्थर से बिछी
अचरज से भरी
वियना की सड़क

(२)

जब हम 'श्यामा'* के साथ चले,

वियना की सड़क

मन में अपने कहने ये लगे,

वियना की सड़क,

वियना की सड़क

वियना की सड़क

हे राम ! मिले बस ऐसी सड़क

हो जिस पर गर्द .गुबार नहीं

कंकड़ ही कुटा हो अच्छी तरह

जो पड़ा भी न हो अस्फाल्ट कहीं

गच सी पक्की हो, हो जिस पर

मोटर का अत्याचार नहीं

हो ऐसी सड़क

वियना की सड़क

(३)

होवे न कहीं भी धूप कड़ी

पानी को लगे न ज़रा भी झड़ी

कुछ हर्ज न हो जो घटा घिरी

बादल की मड़क, बिजली की कड़क

हाँ, हो ऐसी

वियना की सड़क

* श्यामा साइकिल का नाम है जो सर्वाङ्ग काली है ।

(४)

जो कुछ भी न हो तो राम ! मेरे
उलटी मेरे आँधी न चले
स्वीकार मुझे सूरज की तड़प
ऊँची नीची कंकड़ की सड़क
न हो उलटी हवा
वियना की सड़क

(५)

फिर जब 'इमामा' के साथ चले
आकाश से 'वाटरफाल' मिले
पाताल से गहरे ताल मिले
नभ चूंबी ताल तमाल मिले
अचरज से भरी
वियना की सड़क

(६)

लहराते हरे वह खेत मिले
जङ्गल फल फूल समेत मिले
पर्वत हिम से सब सेत मिले
पत्ती आनन्द अचेत मिले
ऐसी सुन्दर
वियना की सडक

(७)

चिड़ियों का मधुर अलाप सुना
बच्चों का मीठा राग सुना

नदियों का कलरव गान सुना
हिम नद का घोर निनाद सुना
सप्तम पूरित
वियना की सड़क

(८)

हँसते लड़के-लड़की देखीं
युवकों की रंग रलियाँ देखीं
साँचे में ढलीं सूरत देखीं
सूरत क्या ! बस परियाँ देखीं
सुन्दरता मय
वियना की सड़क

(९)

आँधी से लड़ना पड़ा हमें
पानी से भिड़ना पड़ा हमें
पर्वत पर चढ़ना पड़ा हमें
तिल तिल कर बढ़ना पड़ा हमें
कुछ सहल न थी
वियना की सड़क

(१०)

आँधी औ गर्द गुबार मिले
मोटर गड्ढे औ ग़ार मिले

(६१)

दर्रों के भी सरदार मिले
लफ़्टराट सुशील कुमार मिले
थी ऐसी सड़क
वियना की सड़क

(११)

कंकड़ भी मिले, पत्थर भी मिले
जंगल झाड़ी, झंकाड़ मिले
और छाती-फाड़ पहाड़ मिले
उफ़ ! ऐसी कड़ी
वियना की सड़क

(१२)

हिम कण की सर्दी मिली कहीं
और नरक अग्नि सी धूप कहीं
भागे सब होश हवास कहीं
बस छूटे केवल प्रान नहीं
थी पूरी बला
वियना की सड़क

(१३)

सिर पर सूरज की धूप कड़ी
नीचे पत्थर कंकड़, बजड़ी
दीवाल सी सम्मुख सड़क खड़ी
और तीर सी उल्टी हवा चली

(१३)

मानों कहती थीं वह यों अड़
' बस रुक, पीछे हट, अब मत बढ़
हलुआ है नहीं
वियना की सड़क

(१४)

मैंने ये कहा—क्या हैं तूने
चकबस्त के हैं ये बचन सुने ?
" आग़ाज़ में कब आज़ादों ने
बेकार ग़मे—अंजाम किया
हो जोरो जफ़ा या .ज़ुल्मोसितम
पीछे को नहीं पड़ने का क़दम
जिसने यह कहा रुक जायेंगे हम
वल्लाह ख़याले ख़ाम किया "
मत मुझ से अकड़
वियना की सड़क

(१५)

फिर तो हुज्जत भर पूर हुई
मेहनत भी बहुत, ज़रूर हुई
मेरी तो रग रग चूर हुई
पर उसकी अकड़ भी दूर हुई
तें कर डाली
वियना की सड़क

(१६)

आई वियना, आराम करें
डैन्यूब में तैरें, स्नान करें
तुमको 'क्रिस्कोद' * सलाम करें
हिन्दू ढँग से 'जयराम' करें
तुम प्यारी सड़क
वियना की सड़क

—श्रीनारायण चतुर्वेदी

अभ्यास

१—वियना कहाँ है? इस सड़क के दृश्यों और इस पर साइकिल से यात्रा करने वाले यात्री के कष्टों और सुखों का वर्णन करो।

२—'वाटरफ़ाल' किसे कहते हैं?

३—छाती फाड़, तीर सी, रग रग चूर हुई इन मुहावरों का भावार्थ समझाओ और इनके प्रयोग द्वारा वाक्य बनाओ।

२४—कागज

कहा जाता है कि मुसलमान शासकों ने ही पहले पहल भारतवर्ष में कागज का प्रचार किया। उन्होंने भी चीनियों से इसका व्यवहार सीखा था। पुराने समय में हिन्दुस्तान में ताड़ के पत्तों और भोजपत्रों पर लिखने की चाल थी। आज कल

* क्रिस्कोद आष्ट्रियन लोगों का अभिवादन है।

भी दक्षिण में पुराने पण्डित ताड़ के पत्तों पर संस्कृत के पवित्र ग्रन्थों को लिखते हैं। अब भी बङ्गाल, बिहार उड़ीसा तथा मद्रास प्रान्तों में ताड़ के पत्तों पर हाथ की लिखी संस्कृत की पोथियाँ मिलती हैं। दुआ, तावीज, जन्मपत्र लिखने के लिये अब तक भोजपत्र तथा तालपत्र का व्यवहार होता है। नेपाल और काश्मीर में मुसलमानों के समय से ही पुरानी हाथ की लिखी कागज की पोथियाँ पायी गयी हैं। सम्भव है वहाँ चीन से कागज बनाने की विद्या आयी हो।

जो हो मुसलमानी अमलदारी में हाथ से कागज बनाने का रोजगार बड़ी उन्नति पर था। आजकल भी जगह जगह पर मुसलमान कागजी मिलते हैं। यद्यपि उनके बनाये कागज महँगे और भद्दे होते हैं, तथापि उनमें एक गुण अवश्य है जो आजकल के सस्ते विलायती कागज में नहीं होता। आजकल के कागज थोड़े ही दिन में खराब हो जाते हैं, उनके रंग बदल जाते हैं तथा उनको कीड़ों से बचाये रखना असम्भव नहीं तो मुश्किल तो जरूर है। बड़ी बड़ी लाइब्रेरियाँ इन कीड़ों के मारे परेशान हैं। परन्तु देशी कागजों में वह गुण है कि उनमें झींगुर, कीड़े जल्द नहीं लगते और पुराने होने पर शीघ्र टूटते नहीं हैं। यद्यपि यहाँ कागज बनाने की कला सैकड़ों वर्ष से चली आती है पर बड़े बड़े कलों से चलने वाले कागज के कारखाने सौ बरस के भीतर ही के हैं। टीटागढ़ में, लखनऊ में, रानीगञ्ज में और पूने में कागज के बड़े बड़े कारखाने हैं।

इनमें से कई तो विदेशियों के ही हैं और एकाध में हमारे देश-भाइयों के हिस्से भी हैं तो थाड़े।

लकड़ी, घास आदि को त्तार क सहारे गलाकर लुगदी बनाते हैं। धुली या बेधुली लुगदी को ही मशीन द्वारा फैलाकर और सुखाकर कागज बनाया जाता है। लकड़ो, घास आदि के रङ्गीन हाने से लुगदी भी भूरी मटमैली या पीले रङ्ग की हाती है। इसे धाने के लिये एक तरह का रंग काटने का मसाला काम में लाते हैं। हलकी खटाई से ही यह मसाला लुगदी को धोकर उजली कर देता है। उजली लुगदी से सफेद कागज बनता है। हमारे देश के कारखानों में लुगदी भी बनती है और कागज भी। परन्तु लुगदी बनाने और धाने के झंझट से बचने को यही कारखाने पहले विदेशों से बनी बनाई धुले धुलाई लुगदी मँगवा लिया करते थे। लड़ाई में इसका आना जब बन्द हुआ है तब हमारी आँखे खुलीं। त्तार और धोबिया चूर्ण की चिन्ता हुई और स्वावलम्बन का पाठ पढ़ा।

यूरोप अमेरिका में कागज का व्यवसाय दो भागों में बँटा हुआ है। कुछ कारखाने तो लकड़ो और घास से लुगदी तैयार करते हैं और कुछ इस लुगदी से रंग बिरंग का कागज बनाते हैं। लुगदी का उपयोग कागज के सिवा अन्य कामों में भी होता है जैसे कचकड़े (सेलुलाइड) कृत्रिम रेशम इत्यादि के बनाने में भी लुगदी काम आती है। आजकल हमारे देश के पेपर मिलों में साबर, भवर और गूँज नामक घासों से भी

लुगदी बनती है। यह घास बङ्गाल, बिहार, छोटा नागपुर, उड़ीसा, नेपाल और संयुक्तप्रान्त में बांधों या जंगल में पायी जाती है। इनके सिवाय चीथड़े, खराब जूट और एसपार्टो घास की भी लुगदी बनती और बाहर भेजी जाती है। पुराने डोर, रस्सी और रद्दी कागज से भी लुगदी तैयार होती है।

आजकल दुनियाँ में जितनी लुगदी तैयार होती है, उसका सैकड़ा पीछे नब्बे लकड़ी से और शेष घास से बनायी जाती है। कौन जाने आगे चलकर कितने पदार्थ इस लुगदी के सहारे बनने लगेंगे। पर इतना तो स्पष्ट है कि कागज का व्यवहार बढ़ता ही जाता है।

रूई के वृक्ष की डंठलें अब तक अमेरिका देश में किसी काम में नहीं लाई जाती थीं। रूई उतारने के पीछे उन्हें डेढ़ आने खर्च करके जलाना पड़ता था। एक मन रूई के पीछे लगभग पाँच मन डंठल बच रहते थे। इससे अन्दाज लगाया जा सकता है कि इनके कुछ उपयोग होने की सूरत पैदा की गई है। यद्यपि यह कला अभी आरम्भ ही हुई है तथापि आशा होती है कि भविष्य में बड़ी लाभदायक होगी। ग्रीनवुड नगर में एक कारखाना खुल चुका है जिसमें लुगदी रूई के डंठल से बनाई जाने लगी है।

अधिकांश यह लुगदी कागज के बनाने में काम आयेगी। साधरणतः लकड़ी की अपेक्षा इन डंठलों के रेशे बहुत मजबूत होते हैं। इससे यह अनुमान किया जाता है कि इससे बनाया

हुआ कागज मुटाई और वजन के लिहाज से मामूली कागज से अधिक मजबूत और स्थाई होगा।

देशी पेपर मिलों में जितना माल तैयार होता है उससे दूना माल बाहर से आता है। हम लोग बहुत सा कागज, दफ़्ती, लिफ़ाफ़े और चिट्ठी के बढ़िया कागज विदेश से मँगवाया करते हैं, लिफ़ाफ़े और चिट्ठी के बढ़िया कागज देशी मिलों में नहीं मिलते, क्योंकि जर्मनी, स्वीडन, नारवे. और आस्ट्रेलिया वाले लिखने तथा छापने का कागज इतना सस्ता और बढ़िया तैयार करते हैं कि उसकी प्रतियोगिता में देशी मिलें ठहर नहीं सकतीं। लड़ाई के पहले देशी बादामी (बाली) कागज ही बाजारों में अधिक नजर आता था। अब सीधे स्वीडन नारवे से जहाजों के आने जाने का प्रबन्ध हो गया है। इस कारण वहाँ से अधिक माल आने लगा है। उसी तरह जापानियों ने भी अपनी जहाजी कम्पनियों की सहायता से अधिक माल भेजना शुरू कर दिया है। जापान अपनी ज़रूरत से अधिक माल तैयार करता है और बचे-बचाये कागज को अनायास ही भारत के बाजारों में पहुँचा देता है। कागज का ख़र्च संसार में ऐसी तेज़ी से बढ़ रहा है कि भय है कि थोड़े दिनों में कागज अत्यन्त महँगा हो जायगा। कागज के लिये संसार की भूख बुझाने को बनस्पति नहीं रह जायगी। भारतवर्ष में अभी घास और लकड़ी के जङ्गल इतने ज़्यादा हैं कि संसार भर को भारत कागज दे सकता है, परन्तु जङ्गलों पर

अँगरेज़ी सरकार का इजारा है। देशी व्यवसायियों को वह लाभ नहीं हो सकता जो विदेशी व्यवसायी उठा सकते हैं। दुनिया में लिखने छापने के सिवाय कागज से सैकड़ों और काम लिये जाते हैं। इङ्गलिस्तान में कागज की बहुत चीज़ें बनने लगी हैं। मुख्यतः रस्सी और रेशम। कागज की रस्सियाँ व्यापार में बहुत चलती हैं। बोरे बनाने के लिये कागज सब से नया पदार्थ है। इसके बोरे टाट के बोरों की बराबरी करते हैं।

जर्मनी में कागज के जूते बहुत काम में आते हैं जो गरम और सुन्दर होते हैं, बटे हुए कागज के बारीक बुने हुए होते हैं। बुनावट इसकी वैसी ही होती है जैसी टोपियों की। जर्मनी में लोहे की नली की जगह कागज की नली काम में लाने लगे हैं।

अमरीका में दरी और चटाइयों की सामग्री कम हो गयी है। वहाँ बटे हुए कागज की दरी और चटाइयाँ बनती हैं। कागज की बिछौने के ऊपर की चादर भी बनती है। अब तो कई व्यापारियों ने कुरसी, मेज, कोच, आलमारी आदि ही नहीं बल्कि पूरा मकान, दीवारें, खिड़कियाँ सब कुछ कागज के बनाये हैं। हमारे देश में कलमदान बरतन आदि तो मुद्दत से बनते आये हैं।

कागज की टोपियों का प्रचार इङ्गलैण्ड में बहुत होता जाता है। वह बहुत सुन्दर होती हैं और कई प्रकार की बनायी जाती हैं। चारों ओर तार लगा देते हैं कि जिससे उनकी शकल बनी

रहे। कागज को पहले तो लपेटते हैं, फिर बटते हैं, टोपी का ऊपरी भाग अलग बनाते हैं और हाशिया (घेरा) अलग। फिर उनको सी लेते हैं और सीवन पर फीता लगा देते हैं।

इस युद्ध के कारण जर्मनी में कपड़ा बहुत कम हो गया है। कपड़े के स्थान पर कागज इत्यादि से मिले हुए पदार्थ काम में लाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि रूई के बने हुए कपड़ों की अपेक्षा कागज के बने हुए वस्त्रों में गरमी कम होती है, परन्तु आवश्यकता सहनशील बना देती है।

—रा० गौ०

अभ्यास

१—जब काग़ज नहीं था तब लोग लिखने का काम किस से लेते थे?

२—देशी काग़ज और मिल से बने काग़ज में क्या अन्तर है?

३—हिन्दोस्तान में काग़ज बनाने के कारख़ाने कहाँ हैं?

४—काग़ज किस किस चीज़ से और कैसे बनाया जाता है?

५—काग़ज की कौन कौन सी चीज़ इङ्गलेण्ड में या यहाँ बनाई जाती है?

२५—भारत-महिमा

१

यह भारत भूतल-भूषण है,
यह पुण्य-प्रभामय पूषण है।

सुख-शांति-सुकर्म-सुधाकर है,
सुषमा-शुचि-सद्गुण-आकर है ॥

२

सजला सफला यह दिव्य-धरा,
पहने तृण का मृदु चीर हरा।
बहु सस्यमयी वन-बाग लिये,
भरती नहिं क्या अनुराग हिये ॥

३

यह है अपनी जननी सुखदा,
हरती सुत-वृन्द-व्यथा-विपदा।
सुचि अन्न दही घृत दुग्ध यहाँ,
करते न किसे कब मुग्ध यहाँ ॥

४

मलयाचल-सेवित-वायु यहाँ,
जिससे सब लोग चिरायु यहाँ।
रवि-जन्हु-सुता जल मिष्ट यहाँ,
मिटते जिससे रुज-रिष्ट यहाँ ॥

५

यह शान्त-तपोवन-पावन है,
मन-भावन शोक-नसावन है,
यह है वह सौख्य-प्रदा वसुधा,
बहती जिसमें शुचि-मुक्ति-सुधा ॥

६

वर वन्य-वनस्पतियाँ इसमें,

अमृतोपम ओषधियाँ इसमें।

बहु धातुमयी खनियाँ इसमें,

बहु-मूल्य महा-मणियाँ इसमें॥

७

करतीं नदियाँ जल-दान इसे,

गिरि हैं करते फल-दान इसे।

नित प्राप्त सभी विधि फूल इसे,

न अलभ्य सुधोपम-मूल इसे॥

८

श्रम-शक्ति-विभूषित संयम है,

न सुयोग्यता में मद का भ्रम है।

बल में पर-पीडन है न ज़रा,

गत दूषण है यह पुण्य धरा॥

९

कवि-काव्य-कला-कलकीर्ति-कथा,

प्रकृति-प्रियता, प्रण, प्रीति-कथा,

सब भाँति अलौकिक है इसकी,

जग बीच प्रभा इतनी इसकी॥

१०

प्रभु-तुल्य प्रजा नृप को भजती,

नृप के हित सर्वस है तजती।

तज दूं स्व-प्रिया—इतनी ममता,
पर भूप तजें न प्रजा ममता !!

११

कल-नाद सुधामय वेणु यहाँ,
रुजहारिणि पावन रेणु यहाँ
अति रम्य निसर्ग यहाँ छवि है,
लख मुग्ध जिसे मन में कवि है ॥

१२

झरने झरते हरते मन हैं,
सुख से चरते मृग के गन हैं।
खग बोल मनोहर बोल रहे,
तरुपत्र अहा! मृदु डोल रहे ॥

१३

मन मोहित है ऋतु-वर्ग छटा,
बिजली बरषा घन नाद घटा।
वन बाग तड़ाग सुशुभ्र बने,
विकसे सर में वर पद्म घने॥

१४

वर वीरता में यह अद्भुत है,
रण-धीरता में यह अद्भुत है।
गुरु है यह आदि महीतल का,
रण-कौशल का, कल का, बलका॥

१५

वरदा करती नित वास यहाँ,
करती शुचि-शक्ति निवास यहाँ
कमला अचला बन के रहती,
सुख शान्ति यहाँ नित है बहती ॥

१६

सुख-मूल उशीर-सुगन्धि-सनी,
क्षिति शोभित काञ्चन रेणु घनी।
शुचि सौरभ पूर्ण सुवर्ण जहाँ—
वसुधा पर है वह देश कहाँ ॥

१७

सुख है शुचि सन्तत-लभ्य सभी,
वर वस्तु जिसे न अलभ्य कभी।
यह प्राप्त किसे महिमा वर है,
बस, "भारत को" यह उत्तर है ॥

—लोचन प्रसाद पाण्डेय

अभ्यास

१—इस पाठ के आधार पर भारत-महिमा पर एक लेख लिखो।

२—पूषण, सुखमा, सौख्यप्रद, निसर्ग और उशीर के अर्थ बताओ।

३—भारत-भूमि से तुम्हें क्या क्या लाभ होते हैं?

४—१० वें पद्य को अच्छी तरह खोल कर समझाओ और अन्तर्कथा वर्णन करो।

२६—पुलिस

जैसे देश को बाहर के शत्रुओं से बचाने के लिये सेना रक्खी जाती है उसी प्रकार देश के भीतर के लोगों की जान माल की रक्षा करने के लिये क्या प्रबन्ध किया जाता है? तुम में से अधिकतर बालक देश के भीतर ही रहते हैं, सीमा पर नहीं, इसलिये देश की आन्तरिक शान्ति के सम्बंध में कुछ बातें तुम स्वयं जानते होगे। तुम नित्य शहरों में और गावों में दिन भर पुलिस के आदमियों को जहाँ तहाँ चौराहों पर खड़े हुए तथा रात को गश्त लगाते हुए और पहरा देते हुए देखते हो। पुलिस के इन कामों का उद्देश्य यह होता है कि देश के अन्दर शान्ति रहे, चोर-डाकू उपद्रव न मचावें। अपराधियों की खोज की जाय और उन्हें न्यायालय पहुँचाया जाय।

पहले यहाँ प्रत्येक गाँव या शहर के आदमी अपनी रक्षा का प्रबन्ध करते थे। शहरों में कोतवाल और गावों में चौकीदार और नम्बरदार रहा करते थे। उन्हें उपज का कुछ भाग मिला करता था। अँगरेज़ों की अमलदारी में यहाँ वेतन पाने वाली पुलिस रखी जाने लगी।

संगठन—आजकल प्रत्येक प्रान्त की पुलिस के प्रधान अफ-सर को इन्सपेक्टर जनरल कहते हैं। वह अपने प्रान्त की शान्ति

का ज़िम्मेवार होता है। उसके नीचे डिप्टी-इन्सपेक्टर-जनरल होते हैं. ये आठ-आठ दस-दस ज़िलों की पुलिस का काम देखते हैं। ज़िले की पुलिस का मुख्य अधिकारी सुपरिन्टेन्डेन्ट कहलाता है प्रत्येक ज़िले में तीन चार 'सर्कल या हल्के' और एक एक हल्के में चार पाँच थाने होते हैं। हल्का एक इन्स्पेक्टर के और थाना सब-इन्सपेक्टर के आधीन होता है। सब-इन्सपेक्टर के नीचे एक हेड-कान्स्टेबल और कई कान्स्टेबल रहते हैं। शहरों में एक एक कोतवाल भी रहता है।

प्रत्येक थाने में कई कई गाँव होते हैं। गाँव में जो चौकीदार रहता है, उसे वहाँ का पुलिस का सिपाही समझना चाहिये। वह गाँव में गश्त लगाता है, और यदि वहाँ कोई अपराध हो, या होने का अनुमान हो तो वह उस गाँव से सम्बन्ध रखने वाले थाने में उसकी रिपोर्ट करता है।

बड़े शहरों में सड़कों पर भीड़ का प्रबन्ध करने के लिये पुलिस के 'सर्जन्ट' रहते हैं। रेलवे स्टेशनों तथा रेलगाड़ियों में भी पुलिस की आवश्यकता होती है, इसलिए वहाँ पुलिस के आदमी रहते हैं। उनका ज़िले की पुलिस से सम्बन्ध नहीं होता, रेलवे पुलिस का संगठन अलग होता है।

पुलिस का काम—ज़िले में पुलिस दो तरह की होती है, एक के पास हथियार होते हैं. दूसरे के पास हथियार नहीं होते। हथियार बन्द अर्थात् सशस्त्र पुलिस का काम सरकारी ख़ज़ानों का पहरा देना, क़ैदियों के साथ जाना और डाकुओं

के दल पर चढ़ाई करना है। उसे फ़ौजी ढंग पर क़वायद करना और गोली चलाना सिखाया जाता है। सशस्त्र पुलिस सरकारी जुर्माना वसूल करती है, अदालतों के सम्मन या वारंट की तामील करती है, सड़कों पर भीड़ न होने देने का प्रबन्ध करती है, आवारा कुत्तों को मारती है, और अपराधियों को पकड़ती है। अपराधों के रोकने के लिए पुलिस पुराने अपराधियों पर दृष्टि रखती है। थानों में बदमाशों और गुण्डों का रजिस्टर रखा जाता है।

पुलिस का काम ऐसा है जो प्रजा से सहयोग मिलने पर ही आसानी से तथा अच्छी तरह हो सकता है; इसलिए पुलिस वालों को चाहिये कि वे अपने आप को प्रजा के सेवक समझें। प्रजा के आदमियों का भी यही कर्त्तव्य है कि वे पुलिस से डरें नहीं और अपना कार्य शान्ति से तथा निडर होकर करते रहें।

खुफ़िया पुलिस—सरकार कुछ कर्मचारी इसलिए भी रखती है कि वे गुप्त रूप से इस बात का पता लगाते रहें कि प्रजा के कौन कौन आदमी उसके विरुद्ध या ग़ैर-क़ानूनी काम करते हैं। इन कर्मचारियों को 'सी० आई० डी०' या खुफ़िया पुलिस कहते हैं। अन्य पुलिस की तरह इसके कर्मचारियों की कोई ख़ास वर्दी नहीं होती। यह हमारे तुम्हारे जैसे ही कपड़े पहनते हैं, इससे इन्हें कोई पहचान नहीं सकता, और ये चुपचाप गुप्त रूप से अपना काम करते रहते हैं। यह पुलिस प्रत्येक प्रान्त में

अलग अलग होती है। एक एक प्रान्त की खुफिया पुलिस के प्रधान अफ़सर का दर्जा अन्य पुलिस के डिप्टी-इन्सपेक्टर-जनरल के समान होता है। इसके आधीन कुछ इन्सपेक्टर और सब-इन्सपेक्टर होते हैं।

खुफ़िया पुलिस का काम षड्यन्त्र, जालसाज़ी, राजद्रोह, नक़ली सिक्का बनाने की, तथा डकैती आदि ऐसे अपराधों की खोज करना है जिनका सम्बन्ध एक से अधिक ज़िलों से हो या जो ऐसे महत्व के हों कि ज़िला पुलिस को न सौंपे जा सकें।

भारतवर्ष में पुलिस के अफ़सर और अन्य कर्मचारी लगभग दो लाख हैं। इनके अतिरिक्त ३०,००० अफ़सर और कर्मचारी सैनिक पुलिस में हैं।

पुलिस की शिक्षा—पुलिस की स्पेशल ट्रेनिंग (विशेष शिक्षा) के लिए प्रायः प्रत्येक प्रान्त में ट्रेनिंग स्कूल खोले गए हैं। कान्सटेबलों की शिक्षा के लिये भी जहाँ-तहाँ ट्रेनिंग स्कूल स्थापित हैं। वे अपने अपने थाने में क़वायद करना सीखते हैं और क़ानून की भी कुछ बातें याद करते हैं। परन्तु अभी तक पुलिस में अनपढ़ आदमी ही अधिक हैं। ये प्रायः सर्वसाधारण पर धाक जमाते रहते हैं, और अपना कर्त्तव्य अच्छी तरह पालन नहीं करते। ऐसी आशा की जाती है कि ज्यों ज्यों शिक्षित और ट्रेन्ड आदमियों की भर्ती अधिक होगी त्यों त्यों पुलिस में क्रमशः सुधार होता जायगा।

अभ्यास

१—खुफिया पुलिस को अंगरेज़ी में क्या कहते हैं? उसका पूरा नाम याद करो।

२—पुलिस का क्या काम होता है! उनके ओहदेदारों के नाम सिलसिलेवार लिखो।

३—थाना किसे कहते हैं! वहाँ के मुख्य सिपाहियों के क्या काम हैं?

२७—कालीरात

घनघोर हैं घटायें तमतोम छा रहा है,
हर एक तरु निशाचर सा दृष्टि आ रहा है।
काली विभावरी ने अन्धेर है मचाया,
जो में उलूक तक के भय भूरि है समाया।
चिंघारते द्विरद हैं चीते दहाड़ते हैं,
तरु धैर्य का हृदय के वन से उखाड़ते हैं।
भूला हुआ सुपथ हूँ भटका हुआ गहन में,
किस पंथ का पथिक हूँ यह भी रहा न मन में।
वन-जन्तु हैं भयंकर ऊधम हैं यह मचाये,
मैं एक, और सम्मुख शतकोटि आपदायें।
बिजली चमक रही है यद्यपि प्रकाशकर है,
पर काल रूपिणी है इससे अतीव डर है।
फिर भी हृदय सरल है आशा न छोड़ती है,

खाती हजार ठोकर पर मुँह न मोड़ती है।

सारे झमेले झंझट वह यों निबेड़ता है,

रह रह घड़ी घड़ी पर यह तान छेड़ता है।

धीरज न छोड़ देना कुसमय न यह रहेगा,

होगा प्रकाश घर घर तू फिर सुपथ लहेगा।

—त्रिशूल

अभ्यास

१—अँधेरी रात के दृश्य का वर्णन करो। यहाँ पर कवि का अँधेरी रात से क्या तात्पर्य है!

२—मनुष्य जीवन में किसको अपने साथ अवश्य रखने से सन्तोष मिलता है?

३—इस कविता को ध्यान पूर्वक विचारो यह एक रूपक है। किसकी उपमा किससे दी है यह सोचो।

४—हाथी को द्विरद क्यों कहते हैं? एक रद वाला देवता कौन है?

२८—चुम्बक की शक्ति

चुम्बक-पत्थर की बात हममें से अनेक जानते होंगे। स्वयं हमारी पृथ्वी भी तो एक प्रकार का चुम्बक पत्थर ही है। इसमें जो आकर्षण शक्ति है वह सभी जानते हैं। सच पूछो तो इसकी इस शक्ति के प्रभाव से ही चुम्बक-पत्थर बना है। कुछ प्रकार के कच्चे लोहों पर जमाने से पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति का प्रभाव पड़ता रहा है, जिससे उनमें भी आकर्षण की शक्ति

पैदा हो गई है। इस प्रकार के ही लोहों को हम चुम्बक-पत्थर कहते हैं, स्वाभाविक चुम्बक-पत्थर के सिवा वैज्ञानिक लोग कृत्रिम चुम्बक-पत्थर भी बना लेते हैं। ये लोग लोहे में चुम्बक-पत्थर की शक्ति पैदा कर देते हैं और यह शक्ति उसमें स्थायी हो जाती है।

वैज्ञानिक लोग चुम्बक-पत्थर बना कर उससे तरह तरह के काम लेते हैं। जहाज के नाविक जिस यन्त्र की सहायता से दिशा का ज्ञान प्राप्त करते हैं उसमें चुम्बक की शक्ति वाली सुई ही काम करती है। पुराने जमाने के लोग इसका यह उपयोग जानते थे। पर अब वैज्ञानिक लोग चुम्बक की शक्ति से बहुत अधिक काम लेते हैं।

चुम्बक की शक्ति बड़ी कारगर होती है। जिसे वह पकड़ लेती है उसे फिर छोड़ने का नाम नहीं लेती। सुई हो या तोप का बड़ा भारी गोला हो वह उसे तब तक थामे रहती है जब तक वह अधिक बोझ के कारण निर्बल नहीं पड़ जाती। वह उस दुष्ट कुत्ते की भाँति यदि किसी चीज़ को एक बार उठा लेता है तो फिर उसे वापस करना नहीं जानता।

चुम्बक की शक्ति दैत्य के समान बलवान् होती है। पर इसका उपयोग एक छोटा बच्चा तक कर सकता है। वैज्ञानिक लोग इसे बड़े साधारण ढंग से पैदा कर लेते हैं। वे इसे बिजली के द्वारा उत्पन्न करते हैं। मुलायम लोहे के एक टुकड़े को तार से लपेट देते हैं। यह तार रेशम, गटापार्चा या किसी दूसरी वस्तु से बड़ी सावधानी के साथ लपेट दिया जाता है। यह सावधानी

इसलिए रक्खी जाती है कि जब उस तार में बिजली की धारा पहुँचाई जाय तब वह बाहर न निकल जाय। जब हमें उस लोहे के टुकड़े में चुम्बक की शक्ति पैदा करने की ज़रूरत होती है तब उस पर लपेटे हुए तार का सम्बन्ध बिजली के तार से कर दिया जाता है। फिर ज्योंही बिजली पहुँचाने के लिये उसका यन्त्र दबाया गया, त्योंही लोहे के उस मुलायम टुकड़े में चुम्बक की शक्ति उत्पन्न हो गई। इस क्रिया के करने के पहले तक वह साधारण लोहे के टुकड़े के सिवाय और कुछ नहीं था।

इस प्रकार लोहे के टुकड़े का चुम्बक बना कर वैज्ञानिक लोग उससे बड़े बड़े काम लेते हैं। मान लो, किसी स्टेशन पर सैकड़ों मन वजन के लोहे के बड़े बड़े गार्डर पड़े हैं। इन्हें गाड़ी पर चढ़ाना है यदि हम उन्हें मज़दूरों के द्वारा गाड़ी पर लादते हैं तो एक एक गार्डर उठाने में बहुत मज़दूर लगेंगे और सारे सामान को लादने में अधिक समय लगेगा। पर इस समय वही लोहे का मुलायम टुकड़ा हमारा काम बात की बात में कर देता है। उसे हम एक लम्बे यन्त्र की ज़ंजीर से लगा कर उसमें बिजली पैदा कर देते हैं और जब वह गार्डर के ऊपर झुकाया जाता है तब गार्डर अपने आप उछल कर उससे चिपक जाता है। फिर उस लम्बे यंत्र द्वारा उसे उठा कर गाड़ी पर रख देते हैं। इधर बिजली का सम्बन्ध तोड़ देते हैं और तब उस यंत्र को हटा लेते हैं। इस प्रकार बिजली पैदा कर एक

एक उठाते जाते और उसका सम्बन्ध भंग कर गाड़ी में रखते जाते हैं। थोड़े ही समय में सारा माल गाड़ी में लद जाता है। क्या यह आश्चर्य जनक बात नहीं हुई ?

परन्तु ऊपर की क्रिया में एक बात का ध्यान रक्खा जाता है। जितने वज़न की चीज़ उठानी होती है, उसके अनुरूप ही चुम्बक की शक्ति पैदा की जाती है।

हमारी चुम्बक की शक्ति केवल हमारी चीज़ों को हमारे इच्छानुसार एक स्थान से उठा कर दूसरे स्थान पर यथाविधि रख ही नहीं देती है, किन्तु वह और भी काम करती है। मान लो, हमें कोई बड़ा भारी यन्त्र तोड़ना है और उसे भट्टी में गला कर उसकी कोई नई चीज़ बनानी है। इस अवसर पर भी हम अपने चुम्बक से काम ले सकते हैं। बिजली की शक्ति पैदा कर हम उस यन्त्र को बहुत अधिक ऊँचा उठा ले जाते हैं, और तब हम बिजली की धारा अपनी बन्द कर देते हैं। बिजली का सम्बन्ध टूटते ही वह यन्त्र धड़ाम से नीचे आ गिरता है। और अपने आप चकनाचूर हो जाता है।

इस प्रकार चुम्बक से अनेक काम लिये जाते हैं। पर युद्ध-काल में डाक्टरों ने इससे अपना भी कुछ काम निकाला है। बम्ब के गोलों के गिर कर फूटने से उनके टुकड़े जिन सैनिकों की देह में जगह जगह घुस जाते थे वे सब टुकड़े डाक्टर लोग चुम्बक की सहायता से बड़ी आसानी से निकाल लेते थे।

वास्तव में चुम्बक की शक्ति से मनुष्य जाति को अनेक लाभ

हुए हैं। इसकी सहायता से उसके अनेक काम बड़ी सरलता से हो जाते हैं।

—रामनारायण बाथम

अभ्यास

१—साबित करो कि पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है ?

२—चुम्बक से क्या क्या काम लिये जाते हैं ?

३—लोहे से चुम्बक कैसे बनाया जाता है ?

२६—वर्षा की बहार

(१)

घिर आई घन घटा, घटा कर घोर घाम को।
चली और ही हवा, न गर्मी रही नाम को॥
पड़ने लगी फुहार, हुआ अभिषेक भूमि का।
नव-अभिनय की हुई अहो अभिनीत भूमिका॥
किसी महा नटराज ने,
प्रकृति नटी को साज कर।
इन्द्रजाल का दृश्य यह,
दिखलाया आकाश पर॥

(२)

आकृति अपनी बदल बदल कर बादल, कैसे।
करें तमाशे, बने प्रगल्भ विदूषक जैसे॥

कभी गरज कर वीर पात्र का अभिनय करते ।
बिजली की तलवार खींच नभ बीच विचरते ॥
कभी "धनुष" धारण किये,
बिन्दु-बाण वर्षा करें ।
कभी हवा से हार कर,
कायर से भागे फिरें ॥

(३)

वाह वाह यह घटा उठी है कैसी काली ।
उद्वेलित हो चला उदधि जैसे छबिशाली ॥
बिजली की यह लहर अग्नि की शिखा बनी है ।
रत्न-छांह सी इन्द्र-धनुष की ज्योति घनी है ॥
फेन-सदृश बकपंक्ति भी,
उसमें शोभा पा रही ।
धन्य धन्य वर्षा नई,
यह बहार दिखला रही ॥

—रूप नारायण पाण्डेय

अभ्यास

१—किस ऋतु के बाद वर्षा ऋतु आती है ? वर्षा की पूर्व ऋतु का कुछ हाल बताओ ।

२—वर्षा में तुमको क्या क्या बहार दिखलाई देती है ? साफ साफ वर्णन करो ।

३—दूसरे पद्य का आशय विस्तार के साथ समझाओ ।

४—इन्द्रजाल, विदूषक और प्रगल्भ शब्दों को अच्छी तरह समझाओ।

३०—पुरुषार्थ और बल

वह कौन सा गुण है जिससे मनुष्य सारे शारीरिक संकटों का, यहाँ तक कि मृत्यु का भी सामना निर्भय हो कर करता है? उस गुण में ऐसी कौन बड़ी शक्ति है जिसके कारण मनुष्य अपने आपको भूल जाता है, और किसी प्रकार के भय या कष्ट की रत्ती भर परवा नहीं करता? हम उसे पुरुषार्थ या साहस कहते हैं।

सभी जानते हैं कि जङ्गली जानवर बड़े निडर और भयानक होते हैं। शिकारी कुत्ते की दृढ़ता तो प्रकट ही है कि वह जीते जी अपने शिकार को हाथ से नहीं जाने देता। पर मनुष्य और पशु में एक बड़ा भारी अन्तर है। मनुष्य में ज्ञान है और पशु में उसका अभाव है। पशु क्रोध, करारी भूख, आत्मरक्षा आदि के अवसर पर मृत्यु का सामना करने से नहीं हिचकता। इसलिये उसका साहस स्वार्थमूलक है। किन्तु मनुष्य विचारशील होने के कारण स्वार्थ के लिये नहीं, किन्तु किसी हितकर कार्य के निमित्त ही आपत्ति और मृत्यु का सामना करता है।

विचारयुक्त साहस का दूसरा नाम पुरुषार्थ है। पुरुषार्थ केवल मनुष्यों में ही पाया जाता है, पशुओं में नहीं। यही पुरुषार्थ वीरों को कर्तव्य की पुकार पर मृत्यु के मुँह में कूद

पड़ने के लिए उत्साहित करता है। इसी शक्ति से मनुष्य बड़ी बड़ी आपदाओं को तिनके के समान समझता है। हमारा इतिहास, वीरता और पुरुषार्थ के आदर्श दृष्टान्तों से भरा पड़ा है। अन्य जातियों के भी इतिहासों में इस प्रकार के दृष्टान्त पाये जाते हैं।

पुराने समय में राजा शिवि ने कबूतर के प्राण बचाने के लिए बाज़ को अपना मांस तक काट कर दे दिया था। संसार के इतिहास में साहस और स्वार्थ त्याग का यह सब से बढ़िया उदाहरण है। इसी प्रकार राजकुमार प्रह्लाद न जाने कितना सताया गया, पहाड़ से फेंका गया, हाथी के पैर तले दबाया गया, अग्नि में जलाया गया, पर उसने अपना प्रण न छोड़ा। जिस साहस से उसने अपनी बात रक्खी वह धन्य है। और तो और मुसलमानी ज़माने में महाराना प्रताप ने अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए कुछ कम पुरुषार्थ नहीं दिखाया था। जिस समय अकबर ने सारे उत्तरी भारत को जीत लिया था, जिसके आतंक से राजपूताना के सभी राजा भयभीत रहते थे, उसी महान् सम्राट से राणा प्रताप ने टक्कर ली और अन्त में विजयी हुए। पर इस विजय के लिए उन्हें वर्षों तक जङ्गल की धूल छाननी पड़ी थी। ऐसे ही पुरुषार्थियों के वर्णन से हमारे इतिहास-ग्रन्थ भरे हुए हैं।

ऊपर के उदाहरणों से दो बातें स्पष्ट हैं। एक यह कि संसार के जीवन और सुख से कोई एक ऐसी बढ़िया चीज भी

है जिसके पीछे मनुष्य संसार के सभी कष्टों को यहाँ तक कि मृत्यु को भी प्रसन्नता के साथ स्वीकार कर लेता है। दूसरी यह कि अत्याचारी अपने शारीरिक बल से शरीर को चाहे जितना दुख पहुँचा ले वह आत्मा को कभी नहीं कुचल सकता? अन्त में झूठ की नहीं, सत्य की, शरीर की नहीं आत्मा की ही विजय होती है। कहने का मतलब यह कि संसार में केवल शरीर-बल ही सब कुछ नहीं है। उसका असली मूल्य तभी है जब मनुष्य में साहस या आत्मिक बल भी हो, जब वह अपने शारीरिक बल को किसी सत् कार्य में लगाना चाहता हो।

शारीरिक और आत्मिक बल में वही अन्तर है जो शरीर और आत्मा में है। आत्मिक बल का उच्च आदर्श क्या है। विपत्तियों और कठिनाइयों को सत्य न समझ कर सत्य-मार्ग पर डटा रहना आत्मिक बल है। कितना ही विरोध या भय पग पग पर क्यों न उपस्थित हो, पर न्याय को न छोड़ना ही सच्चा आत्मिक बल है।

प्रत्येक मनुष्य अपने आत्मिक बल का परिचय दे सकता है। उसे अपना आत्मिक बल दिखलाने के लिए प्रायः अवसर प्राप्त होता है। पर संसार में बहुधा लोग ऐसे श्रेष्ठ गुण का आदर करने के बदले अधिकतर उसका तिरस्कार ही करते हैं। वे आत्म-बल की अपेक्षा शारीरिक बल को ही श्रेष्ठ समझते हैं। यथार्थ में यह उनकी भूल है। क्योंकि जिस प्रकार शरीर से

आत्मा श्रेष्ठ है उसी प्रकार शारीरिक बल से आत्मिक बल भी श्रेष्ठ है।

सच्चा वीर वही है जिसमें अपने आदर्श के पीछे, अपने सिद्धान्त के लिए त्याग करने की शक्ति हो। जो मरने से डरता है, उसका जीना और न जीना दोनों बराबर हैं। इसलिए मनुष्य में आत्मिक बल का होना बड़ा जरूरी है। क्योंकि यदि उसमें केवल शारीरिक बल हुआ और आत्मिक बल न हुआ तो फिर मनुष्य और पशु में अन्तर ही क्या रह जायगा? जिस समय तैमूर ने भारत पर चढ़ाई की थी, कहते हैं; उस समय उसके पास जितने कैदी थे उतने उसकी सेना में सिपाही नहीं थे। केवल दो-दो तीन-तीन सिपाही सौ-सौ कैदियों को वश में रखने के लिये नियुक्त किये गये थे। यह तो एक साधारण बात है कि उन सौ कैदियों में जितना शारीरिक बल होगा उतना उन दो तीन सिपाहियों में नहीं हो सकता। किन्तु एक में शारीरिक और आत्मिक बल दोनों थे और दूसरे में केवल शारीरिक बल। इसलिए एक विजेता थे और दूसरे पराजित।

—गौरीशंकर श्रीवास्तव

अभ्यास

१—पुरुषार्थ किसे कहते हैं?

२—तिनके के समान, जङ्गल की धूल छाननी पड़ी, इन मुहावरों का उपयोग अपने वाक्यों में करो।

३—प्रह्लाद और प्रताप के चरित्र की कथायें बताओ।

४—सच्चा वीर कौन है ? क्या तुम सच्चे वीर बनना चाहते हो, यदि चाहते हो तो किस प्रकार बनोगे ?

३१—प्रकृति

छटा और ही भाँति की देखते।
जहाँ दृष्टि हैं डालते फेर के मुँह॥
कहीं छन्द सुनते, कहीं, रेखते हैं।
कहीं कोकिलों की सुरीली "कुहू कुहू"॥
कहीं आम बौरे, कहीं डालियों के।
तले फूल आके गिरे बीच थाले॥
रखे हैं मनो टोकरे मालियों के।
इकट्ठे जहाँ भौंर से भौंर वाले॥
कहीं व्योम में साँझ की लालिमा है।
कभी स्वच्छ है दृष्टि आकाश आता॥
कभी रात्रि में मेघ की कालिमा है।
कभी चाँदनी देख जी है लुभाता॥
कभी इन्द्र का चाप है सप्त रङ्गी।
जहाँ ज्योति के रङ्ग बूंदे घनी हैं॥
कुसुंभी हरा लाल नीला नारङ्गी।
कहीं पीत शोभा कहीं बैंगनी हैं॥
कहीं ह्वेल से जीव हैं दृष्टि आते।
कहीं सूक्ष्म कीटादि की पंक्तियाँ हैं॥

उन्हें देखकर चित्त है चित्त लाते।
इन्हें देखने की नहीं शक्तियाँ हैं॥
कहीं पर्वतों से नदी बह रही हैं।
कहीं वाटिका में बनी स्वच्छ नहरें॥
कहीं प्राकृतिक कान्ति को कह रही हैं।
छटा शीश बारीश की बड़ी लहरें॥
कहीं पेड़ की पत्तियाँ हिल रही हैं।
कहीं भूमि पर घास ही छा रही हैं॥
सुगन्धें कहीं वायु में मिल रही हैं।
कहीं सारिका प्रेम से गा रही हैं॥
कहीं पर्वतों की छटा है निराली।
जहाँ वृक्ष के वृन्द छाये घने हैं॥
लगी एक से एक प्रत्येक डाली।
मनो पान्थ के हेतु तम्बू तने हैं॥
कहीं दौड़ते झाड़ियों बीच हरने।
लिये मोद से शावकों को भगे हैं॥
कहीं भूधरों से झरें रम्य झरने।
अहा दृश्य कैसे अनूठे लगे हैं॥
कहीं खेत के खेत लहरा रहे हैं।
महा मोद में हैं कृषीकार सारे॥
उन्हें देख कर मूँछ फहरा रहे।
सदा घूमते कांध पै लट्ठ धारे॥

अनोखी कला सच्चिदानन्द की है।
उसी की सभी वस्तु में एक सत्ता॥
अहो! कौमुदी यह उसी चन्द्र की है।
रचा है जिन्होंने लता पेड़ पत्ता॥
जहाँ ध्यान देते हैं चारों दिशा में।
पड़े दीख संसार नियमानुसारै॥
सदा चन्द्र आनन्ददाता निशा में।
सदा सूर्य्य अपना उजेला पसारै॥
यथा काल ही फूल भी फूलते हैं।
फलों से लदे वृक्ष त्यों सोहते हैं॥
नहीं कौन सौन्दर्य पर भूलते हैं।
नहीं कौन के चित्त ये मोहते हैं॥
अचम्भा सभी वस्तु संसार की है।
वृथा दर्प विज्ञान भी ठानता है॥
जगन्नाथ ने सृष्टि विस्तार की है।
वही विश्व के मर्म को जानता है॥

—वागीश्वर मिश्र

अभ्यास

१—'प्रकृति' की शोभा का वर्णन करो।

२—रेखता और छन्द से क्या समझते हो?

३—इस प्रकृति का बनाने वाला कौन है और इस प्राकृतिक सौन्दर्य में तुम को किसकी महिमा दिखलाई देती है?

४—आनन्दाता, कृषीकार, कीटादि शब्दों के टुकड़े करके समझाओ कि यह शब्द कैसे बने ?

३२—खाद

पौधे अपना भोजन मिट्टी और हवा से लेकर बढ़ते हैं। इससे यह भी स्पष्ट है कि मिट्टी का जो अंश पौधों के बढ़ने और फलने फूलने में लग जाता है उसके सदा खर्च होते रहने से मिट्टी निर्बल होती जाती है और कुछ दिनों में पौधों को काफी भोजन नहीं पहुँचा सकती जिससे पैदावार कम हो जाती है। इस कमी को दूर करने के लिये खाद या पांस देने की ज़रूरत पड़ती है। विचारपूर्वक खाद देने से खेत कभी निर्बल नहीं होने पाता और न पैदावार ही घटने पाती है।

हमारे किसान भाई जिस तरह खाद खेतों में पहुँचाते हैं, उनमें कुछ कमी रह जाती है। इसकी साधारण रीति यह है कि बरसात के महीनों में गोरू को खेत में बाँधते हैं जिससे इनका गोबर और पेशाब खेतों में ही रह कर सड़ जाता है। एक या दो अठवारा सब गोरू एक जगह रखे जाते हैं; फिर दूसरी जगह कर दिये जाते हैं। इस तरह बारी बारी से कई खेतों में गोरू के गोबर, पेशाब से लाभ उठाते हैं। इस रीति में दोष यह है कि जब गोबर, पेशाब खेत में कई दिन तक खुला पड़ा रहता है तब उसमें का कुछ अंश उड़ जाता है और कुछ

बरसात के पानी के साथ बह जाता है जिससे खेत को उतना लाभ नहीं पहुँचता जितना थोड़ी ही सावधानी से पहुँचाया जा सकता है।

और ऋतुओं में गोरू खेत में नहीं बाँधे जाते। गोबर से उपले और कंडे बनाये जाते हैं जो जलाने के काम में आते हैं। केवल गोरू के नीचे का कूड़ा कचरा बटोर कर चूल्हे की राख और बटोरन के साथ घूरे पर फेंक दिया जाता है। यह आठ महीने तक ऐसे ही पड़ा रहता है। बरसात के कुछ पहिले खेतों में पहुँचा दिया जाता है। यह रीति भी अच्छी नहीं है। इससे खेत को बहुत कम लाभ पहुँचता है। इन्हीं चीज़ों की बहुत ही अच्छी खाद बनाने की रीति यह है :—

अच्छी खाद बनाने के लिए ऐसी जगह एक गड्ढा खोदो जहाँ बरसात का पानी गड्ढे में न जा सके। गड्ढा इतना बड़ा हो कि सात आठ महीनों का गोबर उसमें अँट सके। इस गड्ढे को छप्पर से छा दो जिससे गोबर पर धूप न पड़े, नहीं तो उसका अच्छा अंश उड़ जायगा। बस इसी गड्ढे में गोबर और पेशाब इकट्ठा करते जाओ, यह सब सड़ गल कर बहुत अच्छी खाद बन जायगी जिसका कोई अंश व्यर्थ नहीं जाता। इस खाद को बोने के पहले खेत में छोड़ दो और दो एक बार जोत दो जिससे खाद मिट्टी में अच्छी तरह मिल जाय तब बीज बो दो। इस रीति में पेशाब का बहुत अंश उसी मिट्टी में रह जाता है जहाँ गोरू बाँधे जाते हैं। इस दोष को दूर करने के लिये

सब से अच्छा यह है कि जहाँ गोरू बाँधे जाते हैं वहाँ दो तीन अँगुल मिट्टी बिछा दी जाय जिससे पेशाब इसी में सोखे । तीन चार दिन पर मिट्टी बटोर कर उसी गड्ढे में फेंक दी जाय और दूसरी मिट्टी इसी तरह गोरू के नीचे बिछा दी जाय । इस तरह हर साल खेत में कुछ मिट्टी भी पहुँचती रहेगी । यह पूछा जा सकता है कि इतनी मिट्टी आवेगी कहाँ से । इसका उत्तर बड़ा सहल है । गाँव के पास के गड्ढे या तालाब से बैसाख-जेठ के महीने में इतनी मिट्टी खोद कर घर में रख लो जो साल भर तक काम देती रहे । मिट्टी खोदने से ताल पटेगा भी नहीं वरन गहरा होता जायगा जिसमें बरसात का पानी अधिक अँटेगा और बहुत दिन तक उमड़ा रहेगा जो पीछे सींचने के काम में लाया जा सकता है ।

अब दूसरी कठिनाई यह रह जाती है कि जब सब गोबर खाद के काम में आ जायगा तब उपले कहाँ से बनेंगे और खाना कैसे पकेगा ? इसके लिये उत्तर यह है कि यदि गोबर की खाद बनायी जाय तो खेती में दूनी तिगुनी पैदावार हो सकती है और उपले बनाने से केवल लकड़ी की बचत होती है । इस लिये सब से अच्छा यह है कि लकड़ी जलाई जाय । पर देहात में लकड़ी का मिलना भी दुर्लभ है । इसलिये लकड़ी की जगह अरहर, कपास इत्यादि की पेड़ी काम में लाई जा सकती है । जब किसान इस बात को समझ जायँगे कि गोबर और पेशाब को ख़राब न करके खाद बना डालने में दूनी पैदावार हो सकती

है तब वे आप ही इसका प्रबन्ध सोच लेंगे कि जलाने के लिये क्या काम में लाया जाय।

किसान इस बात के अच्छी तरह जानते हैं कि जोतने-बोने के कुछ ही पहले भेड़ रखने से खेत मजबूत हो जाता है। इसलिये पैसा देकर भेड़ रखते हैं। ठीक ऐसा ही लाभ गोरू के सड़े गोबर और पेशाब से होता है जब बोने के कुछ पहले इन्हें डालकर खेत को दो एक बार जोत देते हैं।

लोगों के यह अच्छी तरह मालूम है कि गांव के पास के खेत बड़े अच्छे हाते हैं और इनमें पैदावार भी अच्छी होती है। इसका कारण यह है कि गांव के सब आदमी, लड़के और स्त्रियाँ उन्हीं में पाखाना फिरती हैं, इससे खेत ता अच्छा हो जाता पर गन्दगी फैलती है जिससे सारे गाँव की हवा ख़राब हो जाती है। लोगों का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। यदि सब लोग बैठने के पहले एक छोटा सा गड्ढा खोद कर उसे ही काम में लावें और पीछे से खोदी हुई मिट्टी से ढक दें ता गन्दगी भी न फैले और खेत के अधिक लाभ हो, क्योंकि मैले के खुले रहने से खाद का बहुत सा अच्छा अंश उड़ जाता है। इससे गाँव की सफाई भी रहेगी और खेत भी अच्छा हो जायगा।

खली को खाद देने का दस्तूर देहात में बहुत कम है। पर इसकी ताकत गोबर को खाद की ताकत से पन्द्रह बीस गुनी होती है। रेंडी, महुए और नीम की खली ता ऐसी ही कूट कर पौधों की जड़ों में छोड़ी जाती है जिससे पौधों पर तुरन्त असर

पड़ता है, तिल, सरसों, कुसुम, अलसी, पोस्ता और बिनौले की खली गोरू को खिलानी चाहिये। इससे गोरू को लाभ पहुँचेगा और खाद की खाद बन जायगी। एक पंथ दो काज होगा।

देहात में लोग हड्डियों पर बहुत कम ध्यान देते हैं जिसका फल यह होता है कि छोटे छोटे बच्चे इनको जहां कहीं खेत में पाते हैं बटोर कर कौड़ियों के भाव शहर में बेच देते हैं जहां से हड्डियां लदकर विलायत चली जाती हैं। अगर हड्डियों की खाद बनाने के लिये और प्रबन्ध न हो सके तो कम से कम यह होना चाहिये कि गांव की हड्डी कहीं जाने न पावे वह खेत में ही पड़ी रहने दी जाय। इससे दाल वाले पौधों को बड़ा लाभ पहुँचता है।

—महावीर प्रसाद

अभ्यास

१—खाद से खेत को क्या लाभ होता है ?

२—तुम अपने खेतों में डालने के लिए कौन सी खाद किस किस प्रकार तैयार करोगे ?

३—गाँव की हड्डियाँ जो बटोर बटोर कर रेल में लाद कर बाहर भेज दी जाती हैं वे क्या की जाती हैं तुम उनका क्या प्रबन्ध करोगे ?

३३—तुलसीदास जी के दोहे

आपु आप कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोइ।
"तुलसी" सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥१॥

"तुलसी" जे कीरति चहैं, पर-कीरति को खोइ।
तिनके मुँह मसि लागि है, मुए न मिटिहै धोइ ॥२॥

"तुलसी" जस भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय।
आप न आवे ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाय ॥३॥

"तुलसी" मीठे बचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
वशीकरन एक मंत्र है, परिहरु बचन कठोर ॥४॥

"तुलसी" संत सुअंब तरु, फूलि फलहिं पर-हेत।
इत ते ये पाहन हनें, उत ते ये फल देत ॥५॥

काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन में खान।
तब लग पण्डित मूरखौ, "तुलसी" एक समान ॥६॥

स्वारथ सो जानहुँ सदा, जाते विपति नसाय।
"तुलसी" गुरु उपदेश बिनु, सो किमि जानो जाय ॥७॥

गुरु करिबो सिद्धान्त यह, होय यथारथ बोध।
अनुचित उचित लखाय उर, "तुलसी" मिटै बिरोध ॥८॥

नीच निचाई नहिं तजै, जो पावै सतसंग।
"तुलसी" चन्दन विटप बसि, विष नहिं तजत भुजंग ॥९॥

नीच चंग सम जानियो, सुनि लखि "तुलसीदास"।
ढील देत भुँइ गिर परत, खैंचत चढ़त अकास ॥१०॥

"तुलसी" तीन प्रकार ते, हित अनहित पहिचान।
परबस परे परोस बस, परे मामिला जान ॥११॥
"तुलसी" काया खेत है, मनसा भये किसान।
पाप पुण्य दोउ बीज हैं, बुवै सो लुनै निदान ॥१२॥
अर्ब खर्ब लों द्रव्य है, उदय अस्त लों राज।
जो "तुलसी" निज मरन है, तौ आवै केहि काज ॥१३॥
आवत ही हर्ष नहीं, नयनन नहीं सनेह।
"तुलसी" तहाँ न जाइये, कंचन बरसै मेह ॥१४॥
"तुलसी" जग में आइ के, कर लीजे दे। काम।
देवे को टुकड़ा भला, लेवे को हरिनाम ॥१५॥
"तुलसी" कबहुँ न त्यागिये, अपने कुल की रीति।
लायक ही सों कीजिये, ब्याह बैर अरु प्रीति ॥१६॥
राम-चरन अवलंब बिनु, परमारथ की आस।
चाहत बारिद-बुन्द गहि, "तुलसी" उड़न अकास ॥१७॥
लगन महूरत योग बल, "तुलसी" गनत न काहि।
राम भये जेहि दाहिने, सबै दाहिने ताहि ॥१८॥
घर घर माँगत टूक पुनि, भूपति पूजे पाय।
ते "तुलसी" तब राम बिनु, ते अब राम सहाय ॥१९॥
"तुलसी" दिन भल साहु कहुँ, भली चोर कहँ राति।
निशि बासर ता कहँ भलो, माने राम इताति ॥२०॥
जग ते रहु छत्तीस है, राम चरन छत्तीन।
"तुलसी" देखु विचारि हिय, है यह मतौ प्रवीन ॥२१॥

"तुलसी" राम-सनेह करु, त्यागु सकल उपचार।
जैसे घटत न अंक नौ, नौ के लिखत पहार ॥२२॥

सबै कहावत राम के, सबहि राम की आस।
राम कहे जेहि आपनो, तेहि भजु "तुलसीदास" ॥२३॥

घर कीन्हें घर जात है, घर छोड़े घर जाय।
"तुलसी" घर बन बीचही, राम प्रेम पुर छाय ॥२४॥

बरु मराल मानस तजै, चन्द शीत रवि घाम।
मोह मदादिक जो तजै, "तुलसी" तजै न राम ॥२५॥

अभ्यास

१—तुलसीदास की संक्षिप्त जीवनी अपनी नोट बुक में लिखो उसमें उनकी बनाई पुस्तकों की सूची भी हो।

२—कीरति, स्वारथ, परमारथ के शुद्ध रूप लिखो।

३—सु और कु के क्या अर्थ हैं चार चार शब्द सु और कु प्रत्यय लगाकर बनाओ।

४—२, १६, २४ और २५ दोहों का भावार्थ समझाओ।

५—इस पाठ में जो दोहे तुम को अच्छे लगें उनको कण्ठस्थ कर लो।

३४—साँपों का स्वभाव

हिन्दुस्तान के प्रायः सभी भागों में साँप होते हैं। साँप में यह विशेषता है कि जब तक उसको कोई सताता नहीं तब तक वह नहीं काटता। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं कि उसके ऊपर से निकल जाने पर भी उसने किसी को नहीं काटा। इसके विपरीत यदि किसी ने उसके साथ ज़रा छेड़ छाड़ की तो कोप दृष्टि से बचना मुश्किल हो जाता है। साँपों के सम्बन्ध की दो चार सच्ची घटनाओं का यहाँ पर उल्लेख किया जाता है जिससे पाठकों का मन बहलाव के साथ, साँपों के स्वभाव का भी थोड़ा बहुत पता लग जायगा।

छोटे छोटे गाँवों में ग्वाले प्रातःकाल ही अपनी गाय और भैंसों को दुहते हैं। एक दिन एक ग्वाले ने जब अपनी गाय दुही तब उसको उसका दूध हमेशा से कम मालूम हुआ। उस दिन तो उसने इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया; परन्तु जब प्रतिदिन उसको दूध कम मिलने लगा तब उसको सन्देह हुआ कि रात के वक्त कोई पड़ोसी आकर गाय को दुह जाता होगा। यह विचार कर वह एक दिन सारी रात अपने बाड़े में छिप कर बैठा रहा। सारी रात बीत गई, परन्तु कोई मनुष्य न आया। निदान थक कर वह गाय दुहने की तैयारी करने लगा, इतने में उसने एकाएक गाय को काँपते देखा। भय से उसके मुँह पर मुरदनी सी छा गई थी, मानों किसी रोग

से उसका शरीर अकड़ गया हो। ग्वाला गाय से थोड़ी ही दूर पर था। इस प्रकार गाय का रंग बदला देखकर वह बड़ा विस्मित हुआ। ग्वाला इसी आश्चर्य में डूबा था कि उसने और भी आश्चर्यमयी घटना देखी। उसने देखा कि एक बड़ा सा साँप गाय की अगली और पिछली टाँगों में लिपटा हुआ है और उसका एक स्तन अपने मुँह में लेकर बच्चे की तरह दूध पी रहा है। यह हाल देख कर ग्वाला चुपचाप एक कोने में छिपा रहा, क्योंकि वह जानता था कि यदि थोड़ी सी भी आवाज़ साँप के कान में पड़ेगी तो वह झट गाय को काट खायगा। निदान जब साँप दूध पीकर अपने बिल में घुस गया तब ग्वाले के जी में जी आया।

एक मदारी और उसके साँप

एक गाँव में दो मदारी भाई रहते थे। वे हमेशा जंगलों से साँपों को पकड़ते और लोगों को उनके तमाशे दिखाकर टके कमाते थे। एक दिन उन्होंने जंगल से छः साँप एक ही साथ पकड़े और एक टोकरे में बन्द करके अपनी झोंपड़ी के एक कोने में रख दिये। उस झोंपड़ी के दो हिस्से थे, एक में भोजन बनाया जाता था और दूसरे में दोनों भाई सोया करते थे। साँपों का टोकरा सोने के कमरे में रखा गया था। रात को दोनों भाई एक ही बिछौने पर चादर बिछाकर सो रहे। सबेरे एक भाई बहुत जल्द उठ कर भोजन की तैयारी करने लगा और दूसरा सोता ही रहा। थोड़ी देर बाद जब उसकी

आँख खुली तब उसने देखा कि सब साँप उसके चारों तरफ़ फन निकाल कर खड़े हैं। पहले तो यह दृश्य देखकर वह बहुत घबड़ाया और चाहा कि कूद कर भाग जाऊँ। परन्तु चारों तरफ से घिरा होने के कारण भागना मुश्किल था। यह भयंकर दृश्य बहुत देर तक न देख सकने के कारण उसने अपनी आँख बन्द कर लीं। वह मन में सोचने लगा कि ये साँप टोकरे से कैसे निकल आये और इन्होंने मेरी जान लेने का मनसूबा क्यों किया है और फिर जान लेने की सारी तैयारी करके भी विलम्ब क्यों कर रहे हैं? इस प्रकार वह थोड़ी देर तक विचार करता रहा। परन्तु उसका निश्चय न हुआ कि साँपों का मतलब क्या है? आखिर उसकी समझ में आया कि झोंपड़ी की जमीन गोबर से लिपी होने के कारण कुछ काले रंग की हो गयी है और जिस चादर पर मैं पड़ता हूँ उसका रंग दूध की तरह सफेद है। इसलिये साँप इस ओर आकर्षित हुए हैं। यह बात ध्यान में आते ही वह अपने बचाव की तदबीर सोचने लगा; परन्तु उसको किसी सूरत से भी साँपों से बच निकलने की तदबीर न सूझी। आख़िर उसने बहुत ही दबी आवाज़ से अपने भाई को बुलाया। अपने भाई का मन्द स्वर सुन कर दूसरा भाई जो उस समय दूध गरम कर रहा था, वहाँ आया और अपने भाई को साँपों से घिरा हुआ देख कर झट भोजन घर में लौट गया। जो दूध उसने पीने के लिये गरम कर रखा था उसे वह एक थाली में डाल कर वहाँ पर ले आया और उसको

साँपों से थोड़ी दूर पर रख कर फिर भोजन घर में चला गया। वहाँ से वह देखने लगा कि अब क्या होता है? थोड़ी ही देर में साँपों को दूध की सुगन्ध आई और वे सब के सब दूध पर टूट पड़े। उनके दूर होते ही वह मनुष्य, जो अपने को जीते ही मरा हुआ समझ रहा था, दौड़ कर भोजन घर में घुस गया।

साँपों का संगीत-प्रेम

साँपों को संगीत से बड़ा प्रेम होता है। इसी प्रेम के कारण वे अपने को मदारी के हाँथों में फँसा देते हैं। इसी संगीत द्वारा ही मदारी लोग उनको अपने बिलों से बाहर निकाल लेते हैं, यद्यपि मुरली को वे सब से ज्यादा पसन्द करते हैं, तथापि अन्य वाद्य भी उनको कम प्रिय नहीं होते। किसी समय एक स्त्री अपनी वाटिका में बैठी सारंगी बजा रही थी। इतने में उसने अपने से केवल दो फ़ुट की दूरी पर एक बड़े से साँप को फन निकाल कर डोलते देखा। उसको देख कर वह बहुत घबड़ाई और सोचने लगी कि किसी तरह वहाँ से भाग जाऊँ। परन्तु केवल एक हाथ के फासले पर साँप अपने फन को हिलाकर उसी की तरफ देख रहा था। ऐसी अवस्था में वहाँ से भाग निकलना कठिन था। उस मौके पर उसे एक बहुत अच्छा विचार सूझा जिससे उसकी रक्षा हुई। उसने उस वक्त एक नवीन राग बजाना शुरू किया जिससे नाग आनन्दित होकर झूमने लगा। जैसे जैसे

सारंगी से अलाप निकलने लगे वैसे ही वैसे साँप भी
लगा और वह स्त्री धीरे धीरे पीछे हटती गयी। पह
उसका यह विचार था कि इसी प्रकार साँप को घे
डाल कर भाग जाऊँ। परन्तु जब वह बहुत दूर निकल
तब उसको साँप के डोलने से बड़ा मजा आने लगा। ह
जिस प्रकार का ताल बजाती थी। उसी प्रकार साँप भी
सिर को हिलाता था कभी कभी सारंगी की गति त्वरि
जाने पर साँप का सिर भी बड़ी तेजी से हिलने लगत
वाद्य की गति यदि मन्द हो जाती थी तो वह भी मानों
के झोंके खाने लगता था। एक बार उस स्त्री ने जान बूझ
ताल को बिगाड़ दिया। उससे साँप ने बड़ा दुःख
किया, मानों इससे वह बड़ा ही अप्रसन्न हुआ हो। म
यह कि राग के पहचान में साँप ने एक अच्छे गवैइये व
चतुराई दिखायी। आखिर उस स्त्री ने तंग होकर और इस
साँप से खेल-खाल करते रहने से शायद कोई दूसरा
न खड़ा हो जाय इस भय से अपने घर में घुस कर f
बन्द कर लिये। साँप भी राग पूरा हो जाने से अपने
में जा घुसा।

नाग को पैर तले कुचल डालने वाली माँ बेटी

हिन्दुस्तान की स्त्रियाँ जूता नहीं पहनतीं, सब जगह
पैरों फिरा करती हैं। यह रिवाज कुछ अच्छा नहीं, व
इससे कभी कभी बड़ी हानि होती है। एक दिन सन्ध्या

एक लड़की अपने घर के बरामदे में फिर रही थी। घर के बाहर पीपल का एक वृक्ष था वह लड़की फिरते फिरते उस पीपल के वृक्ष के पास आयी और सहमा स्तब्ध होकर खड़ी रह गयी। डर से उसका सारा बदन काँपने लगा। उसमें बोलने की शक्ति भी न रही।

"अम्मा! ओ अम्मा!" आखिर उसने ज्यों त्यों करके बहुत डरी हुई आवाज़ से अपनी माँ को बुलाया।

"क्यों बेटी क्या है?" अन्दर से आवाज़ आयी।

"माँ! मेरा पैर एक साँप पर—उसके सिर पर—पड़ गया है"—लड़की ने कहा।

"वैसे ही खड़ी रहना, मैं अभी आती हूँ, देखना ज़रा हिलना मत"—माँ ने कहा।

इस प्रकार लड़की को आश्वासन देती हुई वह एक दिया हाथ में लेकर उसके पास आयी। लड़की वहीं खड़ी थी। उसका मुँह पीला पड़ गया था। खून सूख गया था और मुख पर घबराहट छाई हुई थी। परन्तु उसने अपना पैर साँप के सिर पर खूब ज़ोर से दबा रखा था। साँप भी उसकी टाँगों में लिपट गया था और उसके पैर के नीचे से अपना सिर छुड़ाने की कोशिश कर रहा था। साँप कुछ छोटा था इसलिये लड़की के पैर तले से निकल न सका। यदि वह बड़ा होता तो अवश्य लड़की को मार डालता।

लड़की की माँ ने आकर अपना पैर लड़की के पैर पर रख

दिया और उसको खूब ज़ोर से दबाने लगी। उसने लड़की के बगल में अपने दोनों हाथ डाल कर उसको बड़ी मजबूती से पकड़ रखा था। कितनी ही देर तक दोनों माँ बेटी सांप का सिर अपने पैर के नीचे दबाये खड़ी रहीं। यदि थोड़ी सी भी गफलत हो जाती तो दोनों माँ बेटी आलिंगित अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो जातीं। इस प्रकार कुछ देर तक दबा रहने से सांप मर गया। निदान जब सांप मर कर धरती पर गिर पड़ा तब मां ने लड़की के पैर पर से अपना पैर उठाया और उन दोनों के जी में जी आया।

—छबीलदास सामन्त

अभ्यास

१—साँपों के स्वभाव के सम्बन्ध में तुमने जो बातें पढ़ी हैं उनके अतिरिक्त जो बातें तुमने साँपों के सम्बन्ध में सुनी हों उन्हें अपनी नोटबुक में दर्ज करो।

२—साँपों को क्या क्या बातें बहुत पसन्द हैं? उनका कुछ हाल बताओ।

३—मदारी साँप कैसे पकड़ते हैं?

३५—स्वदेश प्रेम

है ऐसे कोउ अधम मनुज जीवित जग माँहीं।
जाके मुख सों बचन कबहुँ निकस्यो यह नाहीं॥

"जन्मभूमि अभिराम यही है मेरी प्यारी।
वारों जापै तीन लोक की सम्पत्ति सारी?"
सात समुन्दर पार विदेशन सों करि विचरण।
भयो नांहि घर चलन समय हरषित जाको मन।
जो ऐसो कोउ होउ वेग ही ताकों देखो।
भली भाँति सों वाके सब लच्छन को पेखो॥
चाहे पद्वी वाकी होय बहुत ही भारी।
वाको नाम बड़ो कर जाने दुनियाँ सारी॥
इच्छा के अनुकूल होय वाकों अगनित धन।
कविता वाके हेतु तऊ नहिं करिहें कवि गन॥
केवल स्वारथपन में ही सब समय गँवायो।
मन स्वदेश हित साधन में कबहूँ न लगायो॥
धरी रहत सब धन, बल, पद्वी एक किनारे।
सिर पै जम के आय बजत हैं जबहि नगारे॥
सुठि सुन्दर सुख्याति नाहिं जीवन में पैहै।
जा माटी तें बनो फेरि वामें मिलि जैहै॥
सुमरन, सोक, सुकाव्य मरे पै कोउ न करि है।
करम हीन हतभाग मौत दोहरी सों मरि है॥

—पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

अभ्यास

१—तुम धनी होना पसन्द करोगे या देशभक्त?

२—धनी और देश भक्त का अन्तर वर्णन करो।

३—मातृ-भूमि के लिये तुम क्या करोगे ?

४—समुन्दर, लच्छुन, अगनित, जम, सुमरन के शुद्ध रूप बनाकर इनके अर्थ बताओ।

५—'दोहरी मौत सों मरि हैं' का क्या तात्पर्य है ?

३६—व्यायाम

मनुष्य के लिये वायु, जल और अन्न की जितनी आवश्यकता है, उतनी ही आवश्यकता उसे व्यायाम की भी है। यह सच है कि, व्यायाम के बिना जैसे मनुष्य वर्षों जीता रह सकता है वैसे आहार या जल, वायु और अन्न के बिना नहीं रह सकता। पर यह मानी हुई बात है कि, मनुष्य व्यायाम के बिना अपना आरोग्य नहीं कायम रख सकता। 'आहार' के समान यहाँ 'व्यायाम' शब्द से भी व्यापक अर्थ लेना होगा। व्यायाम याने केवल गुल्ली डंडा, फुटबाल, क्रिकेट या हवा खाने के लिए जाना ही, नहीं है। व्यायाम का अर्थ है, शारीरिक और मानसिक कार्य। जिस प्रकार अस्थि, मांस और मन को आहार चाहिए, उसी प्रकार शरीर और मन को भी व्यायाम की ज़रूरत है। शरीर को व्यायाम न मिले तो शरीर शिथिल होता है और मन को न मिले तो मन शिथिल होता है। मूढ़ता भी एक प्रकार का रोग ही है। कोई भारी पहलवान कुश्ती लड़ने में चाहे शक्तिमान हो, पर अगर उसका मन लड़के का सा चंचल हो तो उसके विषय में 'आरोग्य' शब्द का प्रयोग करना हमारी अप्रयोजकता

है। अँग्रेज़ी में एक कहावत है कि जिसके नीरोग शरीर में नीरोग मन हो, आरोग उसी को प्राप्त हुआ समझना चाहिये।

ऐसे व्यायाम कौन से हैं? निसर्ग ने तो हमारे लिये ऐसी योजना कर रखी है कि हम लोग दिन भर व्यायाम ही किया करें। शान्त चित्त से विचार करके देखा जाय तो मालूम होगा कि पृथ्वी के बहुत बड़े हिस्से के लोग खेती पर ही अपना गुज़ारा करते हैं। खेतिहर के घर के सब मनुष्यों से आप ही व्यायाम हो जाता है। ये लोग जब दिन में आठ दस घंटे बल्कि इससे भी अधिक काम करते हैं तभी उन्हें अन्न-वस्त्र मिलता है। उनके मन को और किसी व्यायाम की अपेक्षा नहीं होती। खेतिहर मूढ़ दशा में काम ही नहीं कर सकता। उसे मिट्टी की पहिचान होनी ही चाहिए। मौसिम का ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। तरकीब के साथ उसे हल जोतना पड़ता है। सूरज, चाँद और सितारों की गति का सामान्य ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। शहर का रहने वाला बड़ा बुद्धिमान् और चतुर मनुष्य भी जब देहात में जाता है तो नितान्त दीन बन जाता है। खेतिहर बतला सकता है कि बीज कैसे बोया जाता है। वह आसपास के पेड़-पौधों और जानवरों का ज्ञान रखता है। खेतिहर तारों की स्थिति पर से रात को भी दिशा मालूम करते हैं। पक्षियों की बोली और उनकी गति से वे बहुत सी बातें जान लेते हैं। जब कई पक्षी इकट्ठे हो कर

कोलाहल मचाते हैं तो वे उससे बारिश अथवा और किसी आगम का अनुमान कर सकते हैं। इस प्रकार खेतिहर अपने लिए यथावश्यक भूगोल विद्या, खगोल विद्या, भूस्तरशास्त्र आदि जानते हैं। इसी से उन्हें कुछ मानव धर्मशास्त्र भी मालूम हो जाता है, और पृथ्वी के विशाल विभाग पर संचार करने के कारण वे ईश्वर का महत्व भी समझते हैं। उनके शरीर सुदृढ़ होते ही हैं। वे अपने रोगों का इलाज आप ही करते हैं, और यह हम लोग देख ही चुके हैं कि उन्हें कैसे मानसिक शिक्षा भी मिलती है।

पर सभी लोग खेतिहर नहीं हो सकते। और यह पाठ भी खेतिहरों के लिये नहीं लिखा गया है। प्रश्न यह है कि जो लोग बनिज-व्यौपार या पेसा ही कोई उद्यम करते हैं, उनके लिए क्या उपाय है? इस प्रश्न का ठीक उत्तर पाने के लिए ही खेतिहरों के जीवन-क्रम का कुछ थोड़ा सा वर्णन लिख दिया गया। जो लोग खेतिहर नहीं हैं उनको चाहिये कि, इस जीवन-क्रम को सामने रख कर वे कुछ कुछ अपना जीवन-क्रम निश्चित करें, और यह ध्यान रखें कि, जितना ही हम लोग खेतिहरों के जीवन-क्रम से दूर न रहेंगे; उतने ही हम नीरोग रहेंगे। खेतिहरों के जीवन-क्रम से यह बात मालूम होगी कि- मनुष्य को आठ घंटे शारीरिक श्रम करना चाहिये और यह श्रम भी इस ख़ूबी के साथ होना चाहिये कि इसके साथ ही साथ मानसिक शक्ति को भी व्यायाम मिले। आज कल व्यापारियों को मानसिक

व्यायाम बहुत करना पड़ता है। परन्तु वह निरा एकहरा है। खेतिहरों के समान ये खगोल, भूगोल या इतिहास नहीं जानते। उनसे बाज़ार दर वग़ैरह पूछ लीजिए। वे यह भी जानते हैं कि कैसे ग्राहक के मत्थे माल मढ़ना होता है। पर इससे मन की शक्ति का पूर्ण विकास नहीं होता। शरीर का कुछ हिलाना-डोलाना, यह कोई मेहनत नहीं है।

पाश्चात्य देश वालों ने ऐसे लोगों के लिये क्रिकेट आदि खेलना लाभकारी बतलाया है। एक मार्ग यह है कि वर्ष के सारे त्यौहार मना कर त्यौहार के दिन विशेष प्रकार के खेल खेलना और मानसिक व्यायाम के लिये ऐसी पुस्तकें पढ़ना जिनसे दिमाग पर बोझ न पड़े। इस मार्ग को ज़रा देखना चाहिये। खेल में समय नष्ट करने से व्यायाम तो होता है, पर अनेक उदाहरणों से यह बात स्पष्ट होती है कि इस व्यायाम से मनुष्य का मन उन्नत नहीं होता। क्रिकेट और फ़ुटबाल खेलने वालों में कितने ऐसे लोग हैं जिनमें ऊँचे दर्जे का मनःसामर्थ्य हो? हिन्दुस्तान में जो खेलाड़ी राजा हैं उनके मनोबल की क्या कैफियत है? इनके विपरीत, जिनमें उत्तम मानसिक शक्ति है उनमें खेल खेलने वाले कितने लोग हैं? अनुभव तो यह गवाही देता है कि उत्तम मनःशक्ति वाले पुरुष कम खेलाड़ी होते हैं। विलायत के लोगों ने आजकल खेल पर बड़ा जोर दिया है, पर ऐसे लोगों को उन्हीं के महाकवि किपलिंग ने 'अकिल के दुश्मन' कह के पुकारा है, और कहा है कि, ये

इंगलैंड के बैरी होगे। हमारे हिन्दुस्तान के मनःशक्ति वालों ने दूसरा ही ढँग इख्तियार किया है। ये लोग मानसिक श्रम ख़ूब करते हैं और उसके मुकाबले शारीरिक व्यायाम कुछ भी नहीं करते। ऐसे लोग बहुत जल्द मर जाते हैं। उनके शरीर माथापच्ची से ही क्षीण हो जाते हैं। कोई न कोई रोग उनके शरीर को घेरे रहता है, और उनका अनुभव देश के लिये लाभकारी होने योग्य भी नहीं हो पाता और वे देह-त्याग करते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि केवल मानसिक व्यायाम या केवल शारीरिक व्यायाम काफी नहीं है। उसी प्रकार जिस व्यायाम से कोई काम नहीं निकलता याने खेल कूद—वह भी ठीक नहीं। जिस व्यायाम से शरीर और मन दोनों एक साथ श्रम कर पाते हैं वही यथार्थ में व्यायाम है, और ऐसा व्यायाम करने वाला मनुष्य ही आरोग्य भोग कर सकता है। ऐसा मनुष्य खेतिहर ही हो सकता है।

तब जो मनुष्य खेतिहर नहीं हैं वे क्या करें? क्रिकेट आदि से होने वाला व्यायाम तो ठीक नहीं है। तब कोई ऐसा व्यायाम ढूँढ निकालना चाहिये जिससे खेतिहर को मिलने वाले व्यायाम का काम हो जाय। व्योपारी या और लोग अपने मकान के आस पास वाटिका लगा सकते हैं और उसमें रोज़ दो चार घण्टे खोदने का काम कर सकते हैं! फेरी करने वालों को अपने काम में ही व्यायाम मिल जाता है। अगर आप दूसरे के मकान में रहते हैं तो आपके मन में यह शंका न

उठनी चाहिये कि हम इनके साथ इनके खेत में जाकर कैसे और क्यों काम करें ? यह प्रश्न उठना मन का छोटापन है। चाहे किसी के भी खेत में जाकर खनने का काम करने से हमारा फ़ायदा ही होगा, अपना घर दुरुस्त होगा और अपने परिश्रम से दूसरे का खेत बनता हुआ देख कर मन को आह्लाद होगा।

जिन्हें खेतों में काम करने का मौक़ा न मिलता हो, या जिन्हें यह काम करना पसन्द न हो उनके लिये दो बातें यहाँ लिखना ज़रूरी है। खेतों में काम करने के बाद मेहनत का काम चलना है। इस व्यायाम को सब व्यायामों का राजा कहा गया है, और यह बहुत सही है। हमारे यहाँ के साधु और फ़क़ीर बहुत तन्दुरुस्त होते हैं। इसके अनेक कारणों में यह भी एक कारण है कि, वे गाड़ी, घोड़ा या और किसी सवारी से काम नहीं लेते। थोरो नामक एक विख्यात अमेरिकन हुआ है। उसने चलने के व्यायाम पर एक बहुत ही विचारणीय ग्रन्थ लिखा है। उसने लिखा है कि, जो मनुष्य फ़ुरसत न मिलने का बहाना कर मकान के बाहर नहीं निकलता, और लिखने पढ़ने का काम करता रहता है उस मनुष्य के लेख भी वैसे ही बीमार होते हैं जैसा बीमार वह ख़ुद होता है। उसने अपना अनुभव यों लिखा है कि, मैंने जिन दिनों अपनी अच्छी से अच्छी पुस्तक लिखी उन दिनों अधिक से अधिक चला करता था। प्रतिदिन चार पाँच घण्टे चलना, वह कुछ समझता

ही न था। जब सच्ची भूख लगती है तब जैसे कोई काम नहीं कर सकते, वैसे ही व्यायाम के विषय में होना चाहिये। हम अपने मानसिक कार्य को ठीक अन्दाज़ नहीं सकते जिससे यह नहीं मालूम होता कि, शारीरिक व्यायाम न करने की हालत में हमारा काम कितना रद्दी और निकम्मा होता है। चलने से शरीर के प्रत्येक अंग में फुरती के साथ रक्ताभिसरण होता है। चलने से प्रत्येक अंग संचालित होता है और शरीर सुडौल बनता है। चलने से हाथ वग़ैरह भी संचालित होते हैं। चलने से शुद्ध हवा मिलती है और बाहर का मनोहर दृश्य दिखाई देता है। एक ही जगह में या गली-कूचे में न चलना चाहिये ; खेतों और पहाड़ों के रास्ते चलना चाहिये। ऐसा करने से सृष्टि-सौन्दर्य्य का महत्व हमारे मन में कुछ न कुछ बैठ जाता है। और एक दो मील चलना कोई चलना नहीं कहलाता ; दस बारह मील चलें तब काफी व्यायाम होता है। रोज रोज जिससे यह न बन पड़ता हो, वह सप्ताह में एक दिन रविवार को खूब चल सकता है। एक रोगी एक वैद्य के पास दवा लेने गया। वैद्य ने उसे रोज़ पैदल सैर करने की सलाह दी। रोगी ने कहा, "मुझमें चलने फिरने की ताकत बिलकुल नहीं है।" वैद्य ने ताड़ लिया कि यह रोगी डरपोक है। वैद्य ने उसे अपनी गाड़ी में बिठा लिया, और रास्ते में खास मतलब से चाबुक़ नीचे सड़क पर डाल दिया। मुरव्वत के ख़्याल से रोगी को चाबुक़ उठाने के लिये गाड़ी से उतरना पड़ा, त्योंही वैद्य ने गाड़ी जोर से हाँक दी। रोगी को

गाड़ी के पीछे पीछे हाँफते हुए दौड़ना पड़ा। रोगी के खूब दौड़ चुकने पर वैद्य ने गाड़ी फेरी और रोगी को गाड़ी में बिठा लिया और कहा, "तुम्हारे लिए चलना ही दवा है।" वैद्य की निर्दयता का आक्षेप सहकर भी रोगी को चलना ही पड़ा। रोगी को भी ख़ूब भूख लगी हुई थी, जिससे वह चाबुक की बात भूल गया। उसने वैद्य को धन्यवाद दिये और घर जाकर सन्तोष के साथ भोजन किया। जिन्हें चलने की आदत न हो और जिन्हें अपच या उससे होने वाली कोई भी बीमारी हो उन्हें मैदान में चलने का उपाय अजमाना चाहिये।

अभ्यास

१—आरोग्यता तुम किसको समझोगे?

२—किस प्रकार के व्यायाम करने से लाभ होता है?

३—जो लोग खेतिहर नहीं हैं वे किस प्रकार व्यायाम करें?

४—शब्दार्थ लिखो:—

व्यापक, अस्थि, शिथिल, निसर्ग, अप्रयोजकता, आह्लाद, मनः-शक्ति, मनोबल।

५—यथार्थ व्यायाम क्या है?

६—व्यायामों का राजा कौन व्यायाम है?

३७—रहीम के दोहे

यों रहीम सुख होत है, उपकारी के अंग।
बांटन वारे के लगै, ज्यो मेंहदो को रंग ॥ १ ॥
रहिमन वे नर मरि चुके, जो कहुँ मांगन जाहिं।
उनते पहिले वे मरे, जिन मुख निकसत नाहिं ॥ २ ॥
रहिमन चुप ह्वै बैठिये, देखि दिनन को फेर।
जब नीके दिन आइ हैं, बनत न लगिहैं बेर ॥ ३ ॥
रहिमन अती न कीजिये, गहि रहिये, निज कानि।
सहिजन अति फूलै तऊ, डारपात की हानि ॥ ४ ॥
रहिमन याचकता गहे, बड़े छोट ह्वै जात।
नारायण हू को भयो, बावन आँगुर गात ॥ ५ ॥
रहिमन रहिला की भली, जो परसै मन लाय।
परसत मन मैला करै, सो मैदा जरि जाय ॥ ६ ॥
रहिमन प्रीति न कीजिये, जस खीरा ने कीन।
ऊपर से तो दिल मिला, भीतर फाँकैं तीन ॥ ७ ॥
रहिमन जिह्वा बावरी, कहि गइ सरग पताल।
आपु तौ कहि भीतर भई, जूती खात कपाल ॥ ८ ॥
सब कोऊ सब सों करै, राम जुहार सलाम।
हित अनहित तब जानिये, जा दिन अटकै काम ॥ ९ ॥
सन्तत सम्पति जानि कै, सब को सब कोइ देइ।
दीनबन्धु बिन दीन की, को रहीम सुधि लेइ ॥ १० ॥

(रहीम कवितावली)

अभ्यास

१—रहीम की संक्षिप्त जीवनी बतलाओ।

२—९ नं० के दोहे का भावार्थ अन्तर्कथा सहित बतलाओ।

३—इन दोहों से तुम क्या उपदेश ग्रहण करोगे? नंबरवार लिखो।

४—"कपाल क्यों जूती खाता है" इसको समझाओ।

३८—कराँची बंदर

शहर की स्थिति

करांची नगर हिन्द महासागर के पश्चिमी कोने पर एक बड़े भारी मैदान में बसा है। प्रयाग से कराँची को दिल्ली, भटिंडा और सामसट्टा होकर जाना पड़ता है। भटिंडे के आगे ही राजपूताने के उत्तरी भाग का रेगिस्तान शुरू हो जाता है। ज्यों ज्यों आगे बढ़ते जाइये रेतीला मैदान बढ़ता जाता है। सामसट्टा जंक्शन है भावलपुर-रियासत के आगे। इसके आगे जब गाड़ी चलती है, तब कोसों का मैदान चारों तरफ़ नजर आता है। कहीं वृक्षों का नाम-निशान नहीं है। हां, बीच-बीच करील और थूहर की झाड़ियां मैदान-भर में दिखलाई देती हैं, जिनके कारण मैदान के दृश्य की रमणीयता और भी बढ़ जाती है। हवा प्रायः तेज चला करती है, जिससे मैदान की रेत उड़-उड़कर खिड़कियों से रेलगाड़ी के अन्दर आती और

मुसाफिरों के कपड़ों और शरीर को धूलि-धूसरित कर देती है। खिड़कियाँ बन्द कर देने पर भी रेत से बचत बहुत कम होती है।

करांची का स्टेशन बहुत सुन्दर तो नहीं है; परन्तु चारों ओर कोसों का मैदान होने के कारण, लम्बा चौड़ा ख़ूब है। रेलवे के लम्बे चौड़े गोदाम हैं, जिनमें करोड़ों मन गल्ला, रुई, बिनौला इत्यादि भारत की—विशेष कर पंजाब की—अमूल्य सम्पत्ति विदेशों को भेजने के लिये उतारी जाती है।

शहर कोसों के रेतीले मैदान में ख़ूब खुला हुआ बसा है। सड़कें ख़ूब चौड़ी और बहुत ही साफ हैं। म्युनिसिपलिटी ने सफ़ाई का बहुत अच्छा प्रबन्ध कर रक्खा है। अनेक घोड़ा-गाड़ियों और अन्य वाहनों के निरन्तर चलते रहने पर भी सड़कों पर कहीं गन्दगी दिखाई नहीं देती। मेहतर घूमते ही रहते हैं; जहाँ ज़रा-सी गन्दगी देखी कि चट साफ कर दिया। परन्तु गलियों की दशा अच्छी नहीं। गलियाँ यद्यपि पक्की और साफ बनी हैं, पर बस्ती के लोग सफ़ाई का ख्याल नहीं रखते। ऊँचे ऊँचे भवनों के ऊपर से स्त्रियाँ गंदा पानी और कूड़ा-करकट दिन-भर नीचे गलियों में फेंका करती हैं। यह गंदगी कभी-कभी रास्ता चलने वालों के ऊपर भी गिर पड़ती है। यदि कोई बिगड़े-दिल का गुंडा हुआ तो उन स्त्रियों को गालियाँ भी सुना देता है। यह प्रथा बहुत बुरी है। परन्तु जब तक शहर के निवासी स्वयं इसका सुधार न करना चाहें, म्युनिसिपलिटी कुछ नहीं कर सकती।

करांची के भवन प्रायः बहुत ही साफ़-सुथरे और सुन्दर बने हुए हैं। विशेषता यह है कि सब प्रायः एक ही रंग—खाकी रंग—से पुते हैं। इसलिये शहर की रमणीयता और भी बढ़ गई है। सवारियाँ यहाँ मोटर, ट्राम, घोड़ा-गाड़ी, ऊँट-गाड़ी और गधा-गाड़ी हैं। ऊँट-गाड़ी और गधा-गाड़ी केवल बोझा ढोने के काम में आती हैं। बैलों का उपयोग प्रायः नहीं के बराबर है। ट्राम गाड़ी यहाँ पर बिजली से नहीं मोटर से चलती है।

समुद्र के किनारे और भारत के पश्चिम-कोण पर होने के कारण करांची का जल-वायु प्रायः सम-शीतोष्ण है। स्वास्थ्य के लिये यहाँ का जल-वायु बहुत लाभदायक जान पड़ता है।

व्यापार-व्यवसाय

व्यापार-व्यवसाय यहाँ जो कुछ है, वह बन्दरगाह के ही कारण। अपने देश की चीज़ों को बाहर भेजना और बाहर की चीज़ों को अपने देश में पहुँचाना ही यहाँ के व्यापारियों का धन्धा है। जहाज़ी स्टेशन, अर्थात् बन्दरगाह और रेलवे-स्टेशन, दोनों में से किसी के गोदामों को देखिये, माल से पटे पड़े हैं। भारत से गल्ला, रूई, बिनौला, अन्य तेलहन-दाना तथा कच्चा माल रवाना किया जा रहा है, और विदेश से आने वाला कपड़ा तथा नाना प्रकार की विलासिता की चीज़ें ज़हाजों से उतार कर, भारत के शहरों में भेजने के लिये, रेल-गाड़ी

पर लादी जा रही हैं । यहाँ के व्यवसायी, और कुछ नहीं, सिर्फ विदेशी कंपनियों के दलाल या एजंट हैं । शहर के बाज़ार विदेशी माल से पटे पड़े हैं ।

कराँची का अधिकांश व्यापार पंजाब, सिंध और दिल्ली-प्रान्त के साथ होता है। अब कराँची बंदर का व्यापारिक महत्व और भी बढ़ने वाला है; क्योंकि विलायत से भारत की डाक हवाई जहाज के द्वारा लाने का विचार हो रहा है, और उसका मुख्य स्टेशन कराँची में ही बनने वाला है। इसके सिवा सिंध के सक्खर-नामक प्रसिद्ध व्यापारोपयोगी नगर के पास, सिंध-नद को बाँध कर, एक नहर निकालने का भी विचार हो रहा है। इस नहर से सिंध की पैदावार बढ़ाई जायगी, और नहर द्वारा माल के आने जाने का भी प्रबन्ध किया जायगा। इन दो कारणों से कराँची-बंदर का व्यापारिक महत्व अवश्य बढ़ जायगा।

दर्शनीय स्थान

मनोरा—यह स्थान बन्दरगाह से लगभग डेढ़ मील दूर, समुद्र के बीच में है । यह एक पहाड़ी है, जिसको घेरकर सरकार ने समुद्री किला बनाया है। इसमें एक दीप-स्तम्भ अर्थात् 'लाइटहाउस' भी है इससे रात को 'सर्चलाइट' डालकर जहाजों के आने-जाने का पता लगा सकते हैं किले में विशेष कर फौजी समान रहता है। इसको देखने के लिये यात्री लोग डोंगी पर चढ़ कर जाते हैं।

बंदरगाह—करांची का बंदरगाह शहर से लगभग तीन मील पर है। शहर के बंदरगाह को जो सड़क जाती है, उसका नाम भी 'बंदर-रोड' है। बंदरगाह को जाते समय बीच में समुद्र का एक चौड़ा-सा सोता पड़ता है। इसके ऊपर दो सुन्दर पुल बने हुए हैं, एक पुल घोड़ा-गाड़ी, ट्राम और मनुष्यों आदि के आने-जाने के लिये हैं, और दूसरा रेलगाड़ी के लिये। बंदरगाह में सामने की ओर सुन्दर सजी हुई डोंगियाँ लगी रहती हैं, जो मनोरे इत्यादि की ओर दर्शकों को ले जाती हैं। दूसरी ओर जहाज़ों अड्डा है, जहाँ जहाजों से माल उतारा और चढ़ाया जाता है। जिस दिन हम बंदरगाह देखने गये थे, उस दिन 'सिटी आफ पेरिस' और 'शिमला' नाम के सुन्दर जहाज़ करांची-बन्दर में ही ठहरे हुए थे। एक जहाज़ मुसाफ़िरों को लेकर जाने को तयार था। इसके तीसरे दर्जे में बहुत से पंजाबी और सिख जानवरों की तरह ठूँस दिए गये थे।

हवा-बन्दर—यह स्थान करांची शहर से कोई ७, ८, मील पर, समुद्र के किनारे, है। यहाँ एक बहुत ही लम्बा-चौड़ा प्लेटफार्म है। प्लेटफ़ार्म में एक ओर सुन्दर बेंचें पड़ी रहती हैं। दोनों तरफ़, और बीच में सुन्दर बारहदरियाँ भी बनी हुई हैं। बीच से एक लम्बा-सा पुल नीचे समुद्र की ओर मैदान में चला गया है। हवा खाने के लिए यह स्थान बहुत ही अच्छा है। चारों ओर कोसों तक मैदान और सामने

समुद्र का मनोहर दृश्य है। इस स्थान को श्री जहाँगीर कोठारी नाम के एक पारसी सज्जन ने तीन लाख रुपये लगा-कर बनवाया है। परन्तु जैसे बम्बई में चौपटी की सैर का आनन्द सभी ग़रीब और अमीर ले सकते हैं, वैसे यहाँ नहीं। इसका कारण यही है कि उक्त स्थान शहर से बहुत दूर पड़ता है। इस स्थान के पास समुद्र के किनारे शिव जी का एक मन्दिर भी है, जहाँ शिव-रात्रि के दिन बड़ा भारी मेला लगता है।

सरकारी बाग़ या चिड़िया घर

यह स्थान शहर से कोई तीन मील के फ़ासले पर है। बाग़ में नाना प्रकार के स्थल, जल और आकाश के जीव-जन्तु, पशु-पत्ती एकत्र किए गये हैं। बीच में एक सुन्दर कृत्रिम तालाब बना है। उसके ऊपर सैर करने के लिये एक हैंगिंग ब्रिज ' अर्थात् झूलता हुआ पुल भी है। इस तालाब में नाना प्रकार के जल-पत्ती और मछलियाँ आदि हैं। कई प्रकार के शेर, चीते, भेड़िये, बन्दर, दरियाई घोड़े, दरियाई हाथी और जंगली सुअर आदि मौजूद हैं। शेर जिस स्थान में है, वहीं एक बिल्ली भी। दोनों बड़े प्रेम से खेल रहे थे। बिल्ली शेर के मुँह से मांस का टुकड़ा खींच कर खा रही थी। शेर और बिल्ली का प्रेम देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, परन्तु फिर सोचा, बिल्ली शेर की मौसी कहलाती है, इसी से शायद यह प्रेम हो!

मग्घा पीर—यह स्थान करांची से कोई सोलह मील पर है। यहाँ घोड़ा-गाड़ी, टाँगा तथा मोटरें जाती हैं। यहाँ की एक पहाड़ी पर 'मग्घे पीर' की एक पुरानी दरगाह है। नीचे एक सुन्दर तालाब है; जिसमें बड़ी-बड़ी सुन्दर मछलियाँ और मच्छ हैं। यहाँ से कुछ दूर पर गंधक के गरम जल के स्रोत हैं जिनमें स्नान करने से चर्म-रोग दूर हो जाते हैं। यह स्थान भी बहुत ही स्वास्थ्यप्रद है। यहाँ कुष्ठ-रोग के बहुत से रोगी आकर निवास करते हैं। कहते हैं, यहाँ के जल-वायु और स्नान से उनको बहुत लाभ होता है।

अभ्यास

१—प्रयाग से कराँची का रास्ता बतलाओ। कराँची कहाँ है? यहाँ के व्यापार का वर्णन करो।

२—यहाँ कौन से स्थान दर्शनीय हैं?

३—प्रकाश-स्तम्भ से क्या काम लिया जाता है?

४—बन्दरगाह किसे कहते हैं?

३६—सीता जी का स्वयम्बर

(१)

दोहा—सतानन्द पद बन्दि प्रभु, बैठे गुरु पहँ जाय।
चलहु तात मुनि कहेउ तब, पठवा जनक बुलाय॥

सीय स्वयंबर देखिय जाई। ईश काहि धौं देइ बड़ाई॥
लखन कहा जस भाजन सोई। नाथ कृपा तव जापर होई॥
हरषे सुनि सब मुनिवर बानी। दीन्ह असीस सबहिं सुख मानी॥

पुनि मुनि वृन्द समेत कृपाला। देखन चले धनुष मखशाला ॥
रंगभूमि आये दोऊ भाई। अस सुधि सब पुरवासिन पाई ॥
चले सकल गृह काज बिसारी। बालक युवा जरठ नर नारी ॥
देखी जनक भीर भइ भारी। सुचि सेवक सब लिये हँकारी ॥
तुरत सकल लोगन पहँ जाहू। आसन उचित देहु सब काहू ॥

दोहा—कहि मृदु वचन विनीत तिन, बैठारे नर नारि।
उत्तम मध्यम नीच लघु, निज निज थल अनुहारि ॥
सब मंचन में मंच इक, सुन्दर विशद विशाल।
मुनि समेत दोउ बंधु तहँ, बैठारे महिपाल ॥

प्रभुहि देखि सब नृप हिय हारे। जनु राकेस उदय भये तारे ॥
अस प्रतीति तिन के मन माहीं। राम चाप तोरब शक नाहीं ॥
बिनु भंजेहु भव धनुष विशाला। मेलिहि सीय राम उर माला ॥
अस विचारि गवनहु घर भाई। जय प्रताप बल तेज गँवाई ॥
विहँसे अपर भूप सुनि बानी। जे अविवेक अन्ध अभिमानी ॥
तोरेहु धनुष व्याह अवगाहा। बिनु तोरे को कुँवरि विवाहा ॥
एक बार कालहु किन होई। सियहित समर जितब हम सोई ॥
यह सुनि अपर भूप मुसुकाने। धर्म-शील हरि-भक्त सयाने ॥

दोहा—जानि सुअवसर सीय तब, पठवा जनक बुलाइ।
चतुर सखी सुन्दर सकल, सादर चली लिवाइ ॥

चली संग लै सखी सयानी। गावत गीत मनोहर बानी ॥
सोह नवल तनु सुन्दर सारी। जगत जननि अतुलित छबिभारी ॥
भूषन सकल सुदेश सुहाये। अंग अंग रचि सखिन बनाये ॥
रंगभूमि जब सिय पगु धारी। देखि रूप मोहे नर नारी ॥

हरषि सुरन दुन्दुभी बजाई । बरषि प्रसून अप्सरा गाई ॥
पानि सरोज सोह जयमाला । औचक चितै सकल महिपाला ॥
होय चकित चित रामहि चाहा । भये मोह वश सब नरनाहा ॥
मुनि समीप बैठे द्वौ भाई । लगे ललकि लोचन निधि पाई ॥

दोहा—गुरु जन लाज समाज बड़ि, देखि सीय सकुचानि ।
लगी बिलोकन सखिन तन, रघुबीरहि उर आनि ॥

रामरूप अरु सिय छबि देखी । नर नारिन परिहरी निमेषी ॥
सोचहिं सकल कहत सकुचाही । विधि सन बिनय करहिं मनमाही ॥
हरु विधि वेग जनक जड़ताई । मति हमार अस देहु सुहाई ॥
बिनु विचार प्रन तजि नरनाहू । सीय राम कर करैं विवाहू ॥
जग भल कहहि भाव सब काहू । हठ कीन्हें अन्तहु उर दाहू ॥
एहि लालसा मगन सब लोगू । वर साँवरो जानकी जोगू ॥
तब बन्दीजन जनक बुलाये । बिरदावली कहत चलि आये ॥
कह नृप जाइ कहहु प्रन मोरा । चले भाट हिय हर्ष न थोरा ॥

दोहा—बोले बन्दी बचन वर, सुनहु सकल महिपाल ।
प्रन विदेह कर कहहिं हम, भुजा उठाइ विशाल ॥

नृप भुजबल विधु शिव धनु राहू । गरुअ कठोर विदित सब काहू ॥
रावन वान महाभट भारे । देखि शरासन गवहिं सिधारे ॥
सोइ पुरारि कोदंड कठोरा । राज समाज आजु जेइ तोरा ॥
त्रिभुवन जय समेत वैदेही । बिनहि बिचारि वरै हठि तेही ॥
सुनि प्रन सकल भूप अभिलाषे । भट मानी अतिशय मनमाषे ॥
परिकर बाँधि उठे अकुलाई । चले इष्ट देवन सिर नाई ॥

तमकि ताकि तक शिवधनु धरहीं। उठै न कोटि भाँति बल करहीं॥
जिनके कछु विचार मन माहीं। चाप समीप महीप न जाहीं॥

दोहा—तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप, उठइ न चलै लजाइ।
मनहुँ पाइ भट बाहु बल, अधिक अधिक गरुआइ॥

भूप सहस दस एकहिं बारा। लगे उठावन टरइ न टारा॥
डगै न शम्भु सरासन कैसे। पापी वचन संत मन जैसे॥
सब नृप भये योग उपहासी। जैसे बिनु विराग सन्यासी॥
कीरति विजय वीरता भारी। चले चाप कर सरबस हारी॥
श्रीहत भये हारि हिय राजा। बैठे निज निज जाइ समाजा॥
नृपन विलोकि जनक अकुलाने। बोले वचन रोष जनु साने॥
दीप दीप के भूपति नाना। आये सुनि हम जो प्रन ठाना॥
देव दनुज धरि मनुज शरीरा। विपुल वीर आये रनधीरा॥

दोहा—कुँवरि मनोहरि बिजय बड़ि, कीरति अति कमनीय।
पावन-हार विरंचि जनु, रचेउ न धनु दमनीय॥

कहहु काहि यह लाभ न भावा। काहु न शंकर चाप चढ़ावा॥
रहा चढ़ाउब तोरब भाई। तिल भरि भूमि न सकेहु छुड़ाई॥
अब जनि कोउ माषै भट मानी। वीर विहीन मही मैं जानी॥
तजहु आस निज निज गृह जाहू। लिखा न विधि वैदेहि बिबाहू॥
सुकृत जाइ जो प्रन परिहरऊँ। कुँवरि कुँवरि रहै का करऊँ॥
जो जनत्यौं बिनु भट भुइ भाई। तौ प्रन करि होतेउँ न हँसाई॥
जनक वचन सुन सब नर नारी। देखि जानकिहिं भये दुखारी॥
माषे लखन कुटिल भये भौंहें। रदपट फरकत नयन रिसौंहें॥

४०—सीता जी का स्वयंबर

(२)

दोहा—कहि न सकत रघुबीर डर, लगे वचन जनु बान।
नाइ राम पद कमल सिर, बोले गिरा प्रमान॥
रघुवंसिन महँ जहँ कोउ होई। तेहि समाज अस कहइ न कोई॥
कही जनक जस अनुचित बानी। विद्यमान रघुकुलमनि जानी॥
सुनहु भानुकुल पंकज भानू। कहौं सुभाव न कछु अभिमानू॥
जो राउर अनुशासन पाऊँ। कन्दुक इव ब्रह्मांड उठाऊँ॥
काचे घट जिमि डारौं फोरी। सकौं मेरु मूलक इव तोरी॥
तव प्रताप महिमा भगवाना। का बापुरो पिनाक पुराना॥
नाथ जानि अस आयसु होऊ। कौतुक करौं बिलोकिय सोऊ॥
कमलनाल जिमि चाप चढ़ावों। सत योजन प्रमान लै धावों॥
दोहा—तोरौं छत्रकदंड जिमि, तव प्रताप बल नाथ।
जो न करौं प्रभु पद सपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ॥
लखन सकोप बचन जब बोले। डगमगानि महि दिग्गज डोले॥
सकल लोक सब भूप डराने। सिय हिय हर्ष जनक सकुचाने॥
गुरु रघुपति सब मुनि मनमाहीं। मुदित भये पुनि-पुनि पुलकाहीं॥
सैनहिं रघुपति लखन निवारे। प्रेम समेत निकट बैठारे॥
विश्वामित्र समय शुभ जानी। बोले अति सनेह मृदुबानी॥
उठहु राम भंजहु शिव चापू। मेटहु तात जनक परितापू॥
सुनि गुरु बचन चरण सिरनावा। हर्ष विषाद न कछु उर आवा॥
ठाढ़ भये उठि सहज सुभाये। ठवनि युवा मृगराज लजाये॥

दोहा—रामहिं प्रेम समेत। लखि, सखिन समीप बुलाइ।
सीता मातु सनेह वश, बचन कहे बिलखाइ॥

सखि सब कौतुक देखन हारे। जोउ कहावत हितू हमारे॥
कोउ न बुझाइ कहै नृप पाहीं। ये बालक अस हठ भल नाहीं॥
रावन बान छुवा नहिं चापा। हारे सकल भूप करि दापा॥
सो धनु राजकुँवर कर देहीं। बाल मराल कि मंदर लेहीं॥
भूप सयानप सकल सिरानी। सखिविधिगतिकछुजाति न जानी॥
बोली चतुर सखी मृदुबानी। तेजवंत लघु गनिय न रानी॥
कहँ कुम्भज कहँ सिंधु अपारा। सोखेउ सुयश सकल संसारा॥
रवि मंडल देखत लघु लागा। उदय तासु त्रिभुवन तम भागा॥

दोहा—मंत्र परम लघु जासु वश, विधि हरि हर सुर सर्व।
महामत्त गजराज कहँ, वश करि अंकुश खर्व॥

काम कुसुम धनुशायक लीन्हें। सकल भुवन अपने वश कीन्हें॥
देवि तजिय संशय अस जानी। भंजब धनुष राम सुनु रानी॥
सखी बचन सुनि भइ परतीती। मिटी विषाद बढ़ी अति प्रीती॥
तब रामहि बिलोकि वैदेही। सभय हृदय विनवति जेहि तेही॥
मन ही मन मनाय अकुलानी। होइ प्रसन्न महेश भवानी॥
करहु सफल आपनि सेवकाई। करि हित हरहु चाप गरुआई॥
गननायक बरदायक देवा। आजु लागि कीन्हीं तव सेवा॥
बार बार बिनती सुन मोरी। करहु चाप गरुता अति थोरी॥

दोहा—देखि देखि रघुबीर तन, सुर मनाव धरि धीर।
भरे बिलोचन प्रेम जल, पुलकावली शरीर॥

नीके निरख नयन भरि शोभा। पितु प्रन सुमिरि बहुरि मनछोभा॥
अहह! तात दारुण हठ ठानी। समुझत नहिं कछु लाभ न हानी॥
सचिव सभय सिख देइ न कोई। बुध समाज बड़ अनुचित होई॥
कहँ धनु कुलिशहु चाहि कठोरा। कहँ श्यामल मृदु गात किशोरा॥
विधि केहि भाँति धरौं उर धीरा। सिरिस सुमन किमि वेधहि हीरा॥
सकल सभा की मति भइ भोरी। अब मोहि शंभुचाप गति तोरी॥
निज जड़ता लोगन पर डारो। होहु हरुअ रघुपतिहि निहारी॥
अति परिताप सीय मन माहीं। लवनिमेष युगसम चलि जाहीं॥

दोहा—प्रभुहिं चितै पुनि चितै महि, राजत लोचन लोल।
खेलत मनसिज मीन युग, जनु बिधुमंडल डोल॥

गिरा अलिनि मुख पंकज रोकी। प्रगट न लाज निशा अवलोकी॥
लोचन जल रह लोचन कोना। जैसे परम कृपन कर सोना॥
सकुची व्याकुलता बड़ि जानी। धरि धीरज प्रतीति उर आनी॥
तन मन वचन मोर पन साँचा। रघुपति पद सरोज मन राँचा॥
तौ भगवान सकल उरबासी। करिहहिं मोहि रघुपति की दासी॥
जेहि कर जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलत न कछु संदेहू॥
प्रभु तन चितै प्रेम प्रन ठाना। कृपानिधान राम सब जाना॥
सियहिं विलोकि तकेउ धनु कैसे। चितव गरुड़लघु व्यालहिं जैसे॥

दोहा—राम बिलोके लोग सब, चित्र लिखे से देखि।
चितई सीय कृपायतन, जानी विकल विशेषि॥

देखी विपुल विकल वैदेही। निमिष विहात कल्प सम तेही॥
तृषित वारि बिनु जो तनु त्यागा। मुये करै का सुधा तड़ागा॥

का वर्षा जब कृषी सुखाने। समय चूकि पुनि का पछिताने॥
अस जिय जान जानकी देखी। प्रभु पुलके लखि प्रीति विसेखी॥
गुरुहिं प्रनाम मनहि मन कीन्हा। अति लाघव उठाय धनु लीन्हा॥
दमकेउ दामिनि जिमि घन लयऊ। पुनि धनु नभ मंडल सम भयऊ॥
लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े। काहु न लखा रहे सब ठाढ़े॥
तेहि छन मध्य राम धनु तोरा। भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा॥

अभ्यास

१—धनुष-मखशाला (रंग-भूमि) का वर्णन अपनी भाषा में करो।

२—जनक का क्या प्रण बन्दी लोगों ने सुनाया था? यह प्रण सुनने के बाद राजाओं की क्या दशा हुई? तथा जनक की निराशा का लक्ष्मण जी पर क्या प्रभाव हुआ? लक्ष्मण जी के क्रोध का वर्णन करो।

३—रामचन्द्र जी को धनुष के पास गया हुआ देख कर रानी को क्या शंका हुई थी, उसका समाधान सखियों ने किस प्रकार किया था?

४—दिग्गज, भवचाप, सयानप, ब्याज और लाघव के अर्थ बताओ।

४१—जुताई

खेत में बीज के बोने के पहले जुताई करने की आवश्यकता होती है। हल, बखर, हैरो आदि चलाकर खेत की मिट्टी को ढीली करने की क्रिया को ही 'जुताई' नाम दिया गया है। पौधे की बाढ़ के लिए मिट्टी का ढीला किया जाना बहुत ही ज़रूरी है। अच्छी तरह से ढीली की हुई मिट्टी में पौधे को ज़्यादा ख़ुराक

मिलती है, जिससे वह ख़ूब फूलता-फलता है और पैदावार ज़्यादा होती है।

खेती की मिट्टी चट्टानों के महीन चूर्ण और वनस्पति के सड़े हुए पदार्थ के मिश्रण से बनी होती है। पौधे को अपने जीवन में जितनी भी भोजन की ज़रूरत होती है, वह सब उसे ज़मीन में से ही प्राप्त होता है। खेत की मिट्टी में मिले हुए और खनिज-तत्व ही पौधे के भोज्य-पदार्थ हैं। जड़ें इन पदार्थों को ग्रहण कर पौधे के अवयवों में पहुँचाती हैं। पत्तों में पाचन-क्रिया सम्पन्न होकर आहार-रस सभी अवयवों में फैला दिया जाता है। पौधे की जड़ों के वृद्धिशील अग्रभाग पर महीन रोयें होते हैं। ये रोयें महीन नली के समान पोले होते हैं। इन रोओं पर मिट्टी के कण चिपके रहते हैं। रोयें इन्हीं कणों में से ख़ूराक ग्रहण करते हैं। ज्यों-ज्यों जड़ें बढ़ती जाती हैं, वे नये-नये कणों से भोजन ग्रहण करते रहते हैं। यह क्रिया किस तरह सम्पन्न होती है, इस पर यहाँ कुछ नहीं लिखा जा सकता है।

मिट्टी के कण जितने ही अधिक छोटे होंगे, पौधों की जड़ों को उतनी ही अधिक जगह ख़ूराक ग्रहण करने को मिलेगी, और इस प्रकार वे अधिक भोज्य-पदार्थ ग्रहण करने में समर्थ हो सकेंगी। इस पर से यह बात साफ़ तौर से मालूम हो जाती है कि खेत की मिट्टी का महीन (स्मरण रहे, आटे जैसा नहीं) चूरा करना बहुत ही ज़रूरी है; और इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए खेतों में जुताई की जाती है। जुताई से और भी कई

प्रकार के लाभ होते हैं। उनमें से मुख्य-मुख्य नीचे दिये जाते हैं—

१—खेत की मिट्टी के अधिकांश भोज्य-पदार्थ, अघुलनशील अवस्था में रहते हैं। वे पानी में घुलने योग्य नहीं होते। और जब तक ये पदार्थ पानी में घुल कर शर्बत का रूप ग्रहण नहीं कर लेते, तब तक पौधे की जड़ों पर के महीन रोयें उन्हें सोख नहीं सकते हैं। जुताई से खेत में मिट्टी ढीली हो जाती है, और मिट्टी उलट-पुलट भी होती है, जिससे हवा, प्रकाश और आतप के प्रभाव से अघुलनशील द्रव्य जल में घुलने योग्य हो जाते हैं।

२—मिट्टी के उलटने से खर-पतवार की जड़ें और फ़सल को नुक़सान पहुँचाने वाले कीड़ों के अंडे आदि ज़मीन की सतह पर आ जाते हैं, जिससे धूप के कारण वे मर जाते हैं। कीड़ों के अंडे आदि पक्षी भी चुन कर खा जाते हैं।

३—बखर, हैरो आदि से मिट्टी ढीली करने से ज़मीन के अन्दर की तरी भाप बन कर नहीं उड़ पाती है, और बरसात के पानी का एक भाग खेत की मिट्टी के अन्दर संचित किया जा सकता है। यह पानी तब रबी की फ़सलों के काम में आ सकता है।

४—ज्वार, मक्का, कपास आदि के बोने के बाद फ़सलों के चार पांच इंच बढ़ जाने पर दो कतारों के बीच की मिट्टी बखर आदि से ढीली करने से फसल की जड़ों को ओषजन

(प्राणप्रद-वायु) मिलता रहता है, जिससे पौधों को रोग नहीं लगने पाता ।

ऊपर जुताई के उद्देश्य और उसके लाभों पर संक्षेप में लिख आये हैं ; अब इस बात पर विचार किया जायगा कि जुताई किस प्रकार की जानी चाहिये ।

फ़सल की जड़ें ढीली ज़मीन में अधिक गहराई तक जाती हैं। इसलिये यह ज़रूरी है कि गहरी जुताई की जाय । देशी हलों से यह काम हो नहीं सकता, क्योंकि ये हल ज़मीन में पाँच-छः इंच से अधिक गहरे नहीं लगते और दो चासों के बीच में ज़मीन बिना जुती रह जाती है । परिणाम यह होता है कि खेत में बहुत सी ज़मीन ढीली नहीं हो पाती और खर-पतवार नष्ट नहीं होते । मैस्टन, रेनसम, किर्लोसकर आदि नाम के लोहे के हलों का उपयोग करने से थोड़े परिश्रम और खर्च से मिट्टी खूब ढीली हो जाती है। ये हल ज़मीन में आठ नौ इंच की गहराई तक घुसते हैं । लकड़ी के हल ज़मीन चीरते हैं, काटते नहीं। लोहे के हल मिट्टी काटते हैं । इसके अलावा एक ख़ास बनावट के कारण लोहे के हल से मिट्टी पलटती भी है और ढेले भी कुछ कुछ टूट जाते हैं । इन हलों का उपयोग करने से दो चासों के बीच में ज़मीन भी छूटने नहीं पाती। लोहे के हल के जुदे-जुदे भाग तैयार मिलते हैं। ज़रूरत पड़ने पर देहाती किसान भी बिना बढ़ई लोहार की सहायता के, आसानी से एक भाग निकाल कर उसकी जगह

दूसरा जमा सकते हैं। लोहे के हलों का उपयोग करने से जुताई के अधिकांश उद्देश्य पूरे हो जाते हैं।

हलों के बाद बखर, हैरो आदि का उपयोग करते हैं। इनसे खेत की सतह पर की दो-तीन इंच की गहराई तक की मिट्टी ढीली रहती है, जिससे बरसात का अधिकांश जल मिट्टी में ही संचित होता रहता है और ज़मीन में संचित किया हुआ जल भाप बन कर उड़ नहीं पाता। सतह की तीन-चार इंच गहराई की मिट्टी ढीली रहने से उसमें हवा खेला करती है, जिससे ज़मीन में का पानी सतह तक नहीं आ पाता है। इसके अलावा बार-बार बखर, हैरो आदि देते रहने से खेत में खर-पतवार भी नहीं उग पाते हैं। अगर खेत में खर-पतवार उगे रहेंगे, तो उनके पत्तों द्वारा अधिकांश जल भाप बनकर वातावरण में मिल जायगा।

रबी की फ़सलों में डौरे, हो आदि चलाने का रिवाज कम है, सिंचाई की फ़सलों में खुरपी से निराई करते हैं। कहीं-कहीं हाथ से चलाये जाने वाले 'हो' से सतह पर की मिट्टी ढीली करने का रिवाज है।

भारत में कई प्रान्तों में ख़रीफ की फ़सलें कतारों में बोई जाती हैं। इन कतारों के बीच की मिट्टी ढीली करने के लिए डौरे, आदि का उपयोग किया जाता है। डौरे बैलों से चलाए जाते हैं। पहले फ़सल की कतारों में उगे हुए खर-पतवार को खुरपी से छील डालने पर डौरे से दो क़तारों के बीच के

खर-पतवार छीले जाते हैं। इसमे समय और द्रव्य की बचत होती है और सतह की मिट्टी ढीली हो जाने से पौधे की जड़ों को ओषजन मिलती रहती है, जिससे वे ख़ूब बढ़ते हैं और रोग भी नहीं लगने पाता।

—शंकरराव जोशी

अभ्यास

१—खेत को जोतने से क्या फायदा होता है ?

२—अगर खेत को न जोतें तो क्या हानि होती है ?

३—देशी हल किस लिये कम काम के लायक हैं ?

४—लोग खेतों में गहरी जुताई क्यों करते हैं ?

५—शब्दार्थ लिखो—

अवयव, परिणाम, सिद्धान्तों, मुख्य, ओषजन, संचित, उद्देश्य, पूर्ति, सम्पन्न।

४२- महात्मा तुलसीदास

जय जय तुलसीदास भक्त-कुल-कमल-दिवाकर।
जय जय ज्ञानागार साधुवर प्रेम-सुधा-कर।
कविताकाननकान्त शान्त रसशुचि सरसावन।
तृषित भक्त जन हेतु सुधाविन्दु बरसावन॥
जय जय भाषा, भाव, कल्पना उपमा आकर।
जय जय जय भगवान राम के अति प्रियचाकर।

जय जय हिन्दू, हिन्द और हिन्दी उपकारक।
जय जय मानवजाति मध्य सद्धर्म्म प्रचारक।

तुमने अति उपकार किया है देव हमारा।
निगमागम का सार हमें समझाया सारा।

घर घर में है व्याप्त महा शुचि कीर्ति तुम्हारी।
आर्य्यजाति चिरकाल रहेगी ऋणी तुम्हारी।

धर्म्म कर्म्म का मर्म तुम्हीं ने हमें सुझाया।
रामचरित्र पवित्र सुधा-सम हमैं पिलाया।

पढ़ कर रामचरित्र हृदय गद्गद् हो जाता।
'धनि धनि तुलसीदास' शब्द यह मुँह पर आता।

जब हम अपनी पूज्य देव-वाणी बिसरा कर।
बैठे थे हतज्ञान हृदय के नेत्र गवाँ कर।

तब लेकर अवतार तुम्हीं ने हमें उबारा।
हिन्दी में भर दिया ज्ञान का शुचि भण्डारा॥

है घर ऐसा कौन जहाँ वह प्रिय रामायन।
श्रद्धाभक्ति समेत नहीं रक्खी सुखदायन।

बाल, वृद्ध, नर, नारि युवा कर उसका गायन।
पाते हैं आनन्द सदा करते पारायन॥

विदेशियों ने स्वाद ज़रा जब उसका पाया।
तब हिन्दी की ओर उन्होंने ध्यान लगाया।

हिन्दी से अनुवाद किया फिर निज भाषा में।
रामचरित गुन गान किया अपनी भाषा में।

वेद पुरान समान मान उसका होता है।
सचमुच हृदय विकार उसीसे तो खोता है।
पढ़ते पूजा समय भक्त जन उसे चाव से।
धूप दीप नैवेद्य चढ़ाते भक्ति भाव से॥
क्या राजा क्या रंक धनी मानी क्या पंडित।
क्या साधू क्या संत और क्या सब गुणमंडित॥
रामायण से नेह सभी जन सम हैं करते।
निज निज रुचि अनुसार रसास्वादन सब करते॥
भारत में यदि देव तुम्हारा जन्म न होता।
तो अपार अज्ञान कौन भारत का खोता॥
काव्यानन्द अमन्द धार फिर कौन बहाता।
कविकुल में कुलवीर कलाधर कौन कहाता॥
जब हिन्दू, हिन्द और हिन्दी है भू पर।
तब तक कीर्ति स्तम्भ अटल है तव महि ऊपर॥
है क्या हम में शक्ति तुम्हारे गुनगन गावें।
गुन-सागर की थाह बिना गुन नर कब पावें॥

अभ्यास

१—यह कविता पढ़ कर तुलसीदास पर एक लेख अपनी नोट बुक में लिखो। उसमें रामायण की बड़ाई भी दिखाओ।

२—वेद और पुराण कितने हैं? उनकी तादाद नाम सहित याद करो।

३—"गुन सागर की थाह बिना गुन नर कब पावें" इसका भावार्थ समझाओ।

४३—पाताल प्रविष्ट पाम्पियाई नगर

किसी समय विसूवियस पहाड़ के पास इटली में एक नगर पाम्पियाई नाम का था। रोम के बड़े-बड़े आदमी इस रमणीय नगर में अपने जीवन का शेषांश व्यतीत करते थे। हर एक मकान चित्रकारियों से विभूषित था। इन्द्र-धनुष के समान तरह-तरह के रंगों से रंगी हुई दुकानें नगर की शोभा को और भी बढ़ा रही थीं। हर सड़क के छोर पर छोटे छोटे तालाब थे, जिनके किनारे भगवान् मरीच-माली के उत्ताप को निवारण करने के लिये कोई पथिक थोड़ी देर के लिये बैठ जाता था तो उसके आनन्द का पार न रहता था। जब लोग रंग विरंगे कपड़े पहने हुए किसी स्थान पर जमा होते थे तब बड़ी चहल-पहल दिखाई देती थी।

कोई-कोई संगमरमर की चौकियों पर, जिन पर धूप से बचने के लिये परदे टँगे हुए थे, बैठे दिखाई पड़ते थे। उनके सामने सुसज्जित मेज़ों पर नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन रक्खे जाया करते थे। गुलदस्तों के मेज़ें सजी रहती थीं। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि वहाँ का छोटे-से-छोटा भी मकान सुसज्जित महलों का मान-भंग करने वाला था। वहाँ का झोपड़ा भी महल नहीं स्वर्ग था।

यहाँ पर हम केवल एक मकान का थोड़ा सा हाल लिखते हैं। उससे ज्ञात हो जायगा कि पाम्पियाई उस समय उन्नति के कितने ऊँचे शिखर पर आरुढ़ था। पाम्पियाई में घुसते ही एक

मकान दृष्टि-गोचर होता था। उसकी बाहरी दालान रमणीय खम्भों की पंक्ति पर सधी हुई थी। दालान के भीतर घुसने पर एक बड़ा लम्बा चौड़ा कमरा मिलता था। वह एक प्रकार का कोशगृह था। उसमें लोग अपना-अपना बहुमूल्य सामान जमा करते थे। वह सामान लोहे और ताँबे के सन्दूकों में रक्खा रहता था। सिपाही चारों तरफ पहरा दिया करते थे। रोमन देवताओं की पूजा भी इसी में हुआ करती थी।

इस कमरे के बराबर एक और भी कमरा था। उसमें मिह-मान ठहराये जाते थे। उसी में कचहरी थी। इससे भी बढ़ कर एक गोल कमरा था। उसके फर्श में संगमरमर और संगमूसा का पच्चीकारी का काम था। दीवारों पर उत्तमोत्तम चित्र अंकित थे। इस कमरे में पुराने इतिहास और राज्यसम्बन्धी काग़ज़ात रहते थे। यह कमरा बीच से लकड़ी के परदों से दो भागों में बटा हुआ था। दूसरे भाग में मिहमान लोग भोजन करते थे।

इसके बाद देखने वाला यदि दक्षिण की तरफ़ मुड़ता तो एक और बहुत सजा हुआ कमरा मिलता। उसमें सोने का प्रबन्ध था। कोचें बिछी हुई थीं। उन पर तीन-तीन फ़ीट ऊँचे रेशमी गद्दे पड़े रहते थे। इसी कमरे में, दीवार के किनारे-किनारे अलमा-रियाँ लगी थीं ; उनमें बहुमूल्य रत्न और प्राचीन काल की अन्यान्य आश्चर्य-जनक चीज़ें रक्खी रहती थीं।

इस मकान के चारों तरफ़ एक बड़ा ही मनोहारी बाग़ीचा

था, जगह-जगह पर फौव्वारे अपने सलिल सीकर बरसाते थे। बूँदें बिल्लौर के समान चमकती हुई भूमि पर गिर-गिर कर बड़ा ही मधुर शब्द करती थीं। फौव्वारों के किनारे-किनारे माधवी लतायें कलियों से परिपूर्ण शरदृऋतु की चाँदनी का आनन्द देती थीं। फौव्वारों के कारण दूर-दूर तक की वायु शीतल रहती थी जहाँ तहाँ सघन वृक्षों की कुञ्जें भी थीं।

आगे चल कर गरमियों में रहने के लिए एक मकान था, जिसे हम मदन विलास कह सकते हैं। पाठक, कृपा करके इसके भी दर्शन कर लीजिये। इसकी भी सजावट अपूर्व थी। इसमें जो मेजें थीं। वे देवदारु की सुगन्धित लकड़ी की थीं। उन पर चाँदी सोने के तारों से तारकशी का काम था। सोने-चाँदी की रत्न जटित कुर्सियाँ भी थीं। उन पर रेशमी झालरदार गद्दियाँ पड़ी हुई थीं। कभी-कभी मिहमान लोग इसमें भी भोजन करते थे। भोजनोपरान्त वे चाँदी के बर्तनों में हाथ धोते थे। इसके बाद बहुमूल्य शराब, सोने के प्यालों में, उड़ती थी। पानोत्तर माली प्रसून-स्तवक मिहमानों को देत था और सुमन-वर्षा होती थी। अन्त में नृत्य आरम्भ होता था। इसी गायन-वादन के मध्य में इत्र-पान होता था और गुलाबजल की वृष्टि होती थी। ये सब बातें अपनी हैसियत के मुताबिक सभी के यहाँ होती थीं। त्योहार पर तो सभी ऐसा करते थे।

एक दिन कोई त्योहार मनाया जा रहा था। वृद्ध, युवा, बालक स्त्रियाँ सभी आमोद-प्रमोद में मग्न थे। इतने में

अकस्मात् विसूवियस से धुआँ निकलता दिखाई दिया। शनैः शनैः धुएँ का गुबार बढ़ता गया। यहाँ तक कि तीन घण्टे दिन रहे ही चारों ओर अन्धकार छा गया। सावन-भादों की काली रात सी हो गई। हाथ को हाथ न सूझ पड़ने लगा। लोग हाहाकार मचाने और त्राहि त्राहि करने लगे। जान पड़ा कि प्रलय आ गया। जहाँ पहले धुआँ निकलना शुरू हुआ था वहाँ से चिनगारियाँ निकलने लगीं। लोग भागने लगे। परन्तु भाग कर जाते भी तो कहाँ? ऐसे समय में निकल भागना नितांत असम्भव था। अँधेरा ऐसा घनघोर था कि भाई बहन से, स्त्री पति से, माँ बच्चों से बिछुड़ गई।

हवा बड़े वेग से चलने लगी, भूकम्प हुआ। मकान धड़ाधड़ गिरने लगे। समुद्र में चालीस-चालीस गज़ ऊँची लहरें उठने लगीं। वायु भी गरम मालूम होने लगी और धुआँ इतना भर गया कि लोगों का दम घुटने लगा। इस महा-घोर संकट से बचाने के लिये लोग ईश्वर से प्रार्थना करने लगे, पर सब व्यर्थ हुआ।

कुछ देर में पत्थरों की वर्षा होने लगी और जैसे भादों में गङ्गा जी उमड़ चलती हैं वैसे ही गरम पानी की तरह पिघली हुई चीज़ें ज्वालामुखी पर्वत से बह निकलीं। उन्होंने पांपियाई का सर्वनाश आरम्भ कर दिया। मिहमान भोजन-गृह में, स्त्री पति के साथ, सिपाही अपने पहरे पर, कैदी कैदखाने में, बच्चे पालने में, दुकानदार चीज हाथ में लिये हुए

रह गये। जो मनुष्य जिस दशा में था वह उसी दशा में रह गया।

मुद्दत बाद, शान्ति होने पर, अन्य नगर निवासियों ने वहाँ आकर देखा तो सिवा राख के ढेर के और कुछ न पाया। वह राख के ढेर खाली न था; उसके नीचे हज़ारों मनुष्य अपनी जीवन-यात्रा पूरी करके सदैव के लिये सो गये थे।

हाय किसके लिये कोई अश्रुपात करे! यह दुर्घटना २३ अगस्त ७६ ईसवी को है। १६४५ वर्ष के बाद जो यह जगह खोदी गई तो जो वस्तु जहाँ थीं मिली।

यह प्रायः सारा-का-सारा शहर पृथ्वी के पेट से खोद निकाला गया है। अब भी इसमें यत्र-तत्र खुदाई होती है और अजूबा-अजूबा चीज़ें निकलती हैं। पांपियाई मानो दो हज़ार वर्ष के पुराने इतिहास का चित्र हो रहा है। दूर-दूर से दर्शक उसे देखने जाते हैं।

—महावीर प्रसाद द्विवेदी

अभ्यास

१—पांपियाई नगर का वर्णन करो।

२—किस समय ज्वालामुखी पर्वत फूटा?

३—पांपियाई में जो मकान था उसे मदन-विलास, क्यों कह सकते हैं?

४—शब्दार्थ लिखो :—

आमोद-प्रमोद, यत्र-तत्र अश्रुपात, मदन-विलास; दृष्टिगोचर, अंकित, निवारण, अत्युक्ति।

४४—वृन्द के दोहे

मधुर बचन तें जात मिटि, उत्तम जन अभिमान।
तनक सीत जलसों मिटे, जैसे दूध उफान॥
कछु बसाय नहिं सबल सों, करे निबल सों जोर।
चलै न अचल, उखारि तरु, डारत पवन झकोर॥
पर घर कबहुँ न जाइये, गये घटत है जोति।
रविमंडल में जात शशि, छीन कला छवि होति॥
निपट अबुध समझै कहा, बुधजन बचन बिलास।
कतहूँ भेक कि जानई, अमल कमल की बास॥
दोषहिं को उमहे गहै, गुन न गहै खल लोक।
पियै रुधिर पय ना पियै, लगी पयोधर जोंक॥
क्यों कीजे ऐसो जतन, जाते काज न होय।
पर्वत में खोदै कुआँ, कैसे निकसै तोय॥
धन बाढ़े मन बढ़ि गयो, नाहिन मन घट होय।
ज्यों जल संग बाढ़े जलज, जल घटि घटै न सोय॥
सब तें लघु है माँगिबों, या में फेर न सार।
बलि पै जाचत ही भयो, बामन तन करतार॥
बीर पराक्रम ना करै, तासों डरत न कोय।
बालकहू को चित्र को, बाघ खिलौनो होय॥
भली करत लागै बिलम, बिलम न बुरे बिचार।
भवन बनावत दिन लगै, ढाहत लगै न बार॥

सुख सज्जन के मिलन को, दुर्जन मिले जनाय।
जानै ऊख मिठास कौ, जब मुख निंब चबाय॥
जाहि मिलै सुख होत है, तेहि बिछुरे दुख होय।
सूर उदै फूलै कमल, ता बिन सकुचै सोय॥
कछु कहि नीच न छेड़िये, भलो न वाको संग।
पाथर डारे कीच में, उछरि बिगारै अंग॥
सुजन बचावत कष्ट तें, रहै निरन्तर साथ।
नैन सहायक ज्यों पलक, देह सहायक हाथ॥
बुद्धिमान गम्भीर को, संगत लागै नाहिं।
ज्यों चंदन ढिग अहि रहत, विष न होय तिहि माहिं॥
बचन पारखी होहि तू, पहले आप न भाख।
अनपूछे नहिं भाखिये, यही सीख जिय राख॥
नैन स्रवन मुख नासिका, सबही के इक ठौर।
कहिबौ सुनिबौ देखिबौ, चतुरन को कछु और॥
भाव भाव की सिद्धि है, भाव भाव में भेव।
जो माने तो देव है, नहीं भीत को लेव॥
जैसो गुन दीनों दई, तैसो रूप निबंध।
ये दोऊ कहँ पाइये, सोने और सुगंध॥
श्रीमही सों सब मिलत है, बिन श्रम मिलै न काहिं।
सीधी अँगुली घी जम्यो, क्यों हूँ निकरै नाहिं॥
जो जाको गुन जानहीं, सो तेहि आदर देत।
कोकिल अम्बहि लेत है, काग निबौरी हेत॥

जाही ते कछु पाइये, करिये ताकी आस ।
रीते सरवर पै गये, कैसे बुझत पियास ॥

अभ्यास

१—पयोधर और जलज किसे कहते हैं ? यह भी समझाओ कि क्यों कहते हैं ?

२—इन दोहों से तुम क्या क्या शिक्षा ग्रहण करोगे ? उन शिक्षाओं की एक सूची बनाओ ।

३—बलि से माँगते समय 'कर्तार' बावन तन क्यों और कैसे हुए ? यह कथा बतलाओ ।

४—मिठास, भेव, जलज व्याकरण से क्या हैं ? समझाओ ।

परिशिष्ट (१)

प्रथम भाग

—:०:—

शब्दार्थ तथा पाठ सहायक बातें

पाठ १—बोध=ज्ञान। भवसागर=संसार-समुद्र। दिव्य दृष्टि=अलौकिक ज्ञान, सुन्दर नज़र। पथ दर्शक=रास्ता बतलाने वाला। जलधि (जल+धि) पानी का ख़ज़ाना अर्थात् समुद्र। क्लान्त श्रान्त=थके हुए।

,, २—प्रवर्तक=प्रेरक, चलाने वाले। गियाना। (ज्ञाना)। प्रवृत्ति=इच्छा, झुकाव। पैतृक व्यवसाय=बाप दादा का रोज़गार। कट्टर=हठी, ज़िद्दी। साखी (साक्षी)=कबीर के दोहे। बीजक=सूची अर्थात् कबीर की कृतियों का संग्रह। उलटा=जिसका प्रतिकूल अर्थ हो, जैसे 'नैया बीच नदिया डूबी जाय'। हंस=मुक्तात्मा। सत्यान्वेषक=सत्य के खोजी। अगाध=अथाह।

,, ३—पिञ्जर=पिंजरा। कीर=तोता। अगार=घर।

,, ४—'पूत के लक्षण पालने में'=बालपन में ही उनमें शुभ लक्षण मालूम होते हैं। अनभिज्ञ=अजान। सिविलवार=गृह युद्ध। सिद्धहस्त=जिनके हाथ में सफलता है। "समय के फेर से सुमेरु होत माटी को"=बुरा समय आने पर सोना भी मिट्टी हो जाता है।

अर्फनेज़=अनाथालय। वर्नाक्युलर=देशी भाषा। लाइ-ब्रेरी=पुस्तकालय, वाचनालय।

पाठ ५—दामिनि=बिजली। नभ=आकाश। यथा=जैसे। अघात=चोट। संकुचित=भरी हुई। वटु=ब्रह्मचारी। डावर=मठमैला। सस=अनाज। खद्योत=जुगनू। निबिड=घना। अगस्त=एक तारा है यह भाद्रमास (भादों) के अन्त में उदय होता है। इसके उदय हो जाने पर जल निर्मल होता हैं और वर्षा की समाप्ति होती है। रस रस=धीरे धीरे। सुकृत=सत्कर्म। मधुकर=भ्रमर। निकर=समूह।

,, ६—पुरानी लकीर के फकीर=पुरानी रीति भली बुरी कैसी ही हो उसी पर चलना। परकोटा=चहार दीवारी। बाक्सर=चीन की एक जाति। रिक्शा=हाथ से खींचने वाली गाड़ी। मन्त्रणा=सलाह। भव्य=सुन्दर। प्रजा तन्त्र=प्रजा द्वारा संचालित।

,, ७—सुषुप्त=सोता हुआ। कर्म सूत्र आबद्ध=कर्म के तागे से बँधे हुए। भास्कर=सूर्य। मेमने=बकरी के बच्चे। सौरभ=सुगन्ध। निकुञ्ज=लतागृह। भवतापित=संसार के दुखों से दुखी। शूल=दुःख। निरत=लीन, लगे।

,, ८—रेंड=अंडा। खत=घाव, गड्ढा। मशीन=यन्त्र, कल। अलकतरा=पत्थर के कोयले से निकाला हुआ एक गाढ़ा काला पदार्थ, तारकोल या कोलतार।

,, ९—कल्दार=रुपया। कल्पतरु=कल्पवृक्ष, इच्छित धन देने वाला वृक्ष। शिल्पकला=कारीगरी। वसुन्धरा=पृथ्वी। पुरन्दर=इन्द्र। शान्ताकार=शान्तस्वरूप। दारुण=कठिन। तनय=पुत्र। रत्नाकर=समुद्र।

पाठ १०—अभीष्ट=इच्छित। अनर्गल=लगातार। 'बुढ़िया की कहानी'=असत्य बातें, गप, कपोल कल्पना।

" ११—सहोदर=भाई। स्वर्ग सहोदर=स्वर्ग के समान सुन्दर। जाने—उत्पन्न हुए। सौख्य गृह=सुख का घर।

" १२—मुद्रणकला=छापने का विद्या या शिल्प। सम्यक्—पूर्ण। ज्ञानोपलब्ध (ज्ञान+उपलब्ध) ज्ञान का प्राप्त करना। महर्घता=दाम की तेज़ी, महँगाई। मनोगत (मनः+गत)=मन में आया हुआ। उपलब्ध=प्राप्त। एक सूत्र में बँधा हुआ है—सारे संसार में एक दूसरे का सम्बन्ध स्थापित है। कला-कुशल—शिल्प कार्य में चतुर। अध्ययन=पढ़ना। समावेश=मेल। सानुनय =विनय के साथ। अमोघ=अव्यर्थ।

" १३—अट्टालिक=राजगृह, बड़ा मकान। शीतार्त=शीत से दुःखी। तीसी—अलसी। पट=वस्त्र। रानी सरंगा—एक कहानी है जिसमें सारंगा रानी और सदावृक्ष की प्रेम कहानी का वर्णन है। यह पुस्तक विद्यार्थियों के पढ़ने योग्य नहीं है। लुक=फ़ासफरस के जलने से जो आग की लपट दिखाई देती है उसे ग्रामीण लोग भूत समझते हैं। डीह काली=काली का स्थान जो ऊँचे टीलों पर या उजाड़ स्थान में होता है।

" १४—स्तम्भित=चकित, हक्का बक्का। पेरिस=योरोप महाद्वीप के फ्रांस देश की राजधानी। दिशा सूचक=दिशायें बतलाने वाला। अगम्य=जहाँ पहुँच न हो सके।

" १५—सम्राट्=राजा। सिरमौर=मुखिया।

" १६—यत्र तत्र=जहाँ तहाँ।

पाठ १७—मन्तव्य=अभिप्राय, मतलब । क्लान्त=थका हुआ । द्रवित=पिघलना ।

” १८—वात्सल्य=छोटों पर बड़ों के प्रेम को वात्सल्य कहते हैं । ध्रुव—महाराज उत्तानपाद की द्वितीय रानी सुमति के पुत्र थे । एक दिन राजा उत्तानपाद अपनी प्रिय रानी सुरुचि के पुत्र को गोद में लिये हुए उसी से बातें कर रहे थे कि ध्रुव जो ५ वर्ष का बालक था उधर से आ निकला । बाल स्वभाव वश उसको भी इच्छा राजा की गोद में बैठने को हुई और उसने राजा से अपनी गोद में बैठा लेने की इच्छा प्रकट की ; किन्तु सुरुचि ने अपमान पूर्ण शब्द कह कर उसे पिता की गोद में बैठने से रोक दिया । इस अपमान का प्रभाव ध्रुव की माता पर भी बहुत पड़ा, उसने ध्रुव को ईश्वर की गोद में बैठने का उपदेश दिया । जिसको मान कर ध्रुव जंगल में भगवान की खोज को चला गया । वहाँ उसे साक्षात् भगवान के दर्शन हुए । और घर आकर धर्म पूर्वक राज्य संचालन किया । अकृत्रिम=स्वाभाविक । प्रत्युपकार=बदला ।

” १९—जगतीतल=संसार । काल-गङ्गा=समय रूप गङ्गा । प्रवृत्ति=लगाव, माया में फँसना । निवृत्ति=वैराग । परिबन्ध=बन्धन । रण करखा=युद्ध गान ।

” २०—‘ऊँच नीच देखना’—सुख दुःख सहन करना । फूले न समाते थे=बहुत प्रसन्न थे । कर्कश=भयानक । मैंचेस्टर=विलायती कपड़ा बुनने का एक बड़ा केन्द्र है, वहाँ हज़ारों कपड़ा बुनने के मील हैं ।

” २१—आदित्य=सूर्य । किरीट—मुकुट ।

पाठ २२—अहेर=शिकार । ढाढ़स=धीरज । विमोचन=छूट जाना । सान्त्वना=धीरज । घुली जाती थी=पिघली जाती थी, दुर्बल होती जाती थी । व्यस्त=व्याकुल । विदीर्ण=फटा । ममता पूर्ण=प्रेम भरी, मोह युक्त । निष्ठुरता=कठोरता । मृग शावक=हिरन के बच्चे । नैराश्य=निराशा, ना उम्मेदी । प्रांगण=आँगन, सहन । आलोकित=प्रकाशित, प्रकाशमय । उपहास=हँसी । मछुआ=धीवर, मछली पकड़ने वाला । दुत्कार दिया =अपमानित कर के हटा दिया, दुरदुरा दिया । अन्धे को आँखें मिलना=अलभ्य वस्तु का लाभ होना, असंभव का संभव हो जाना ।

” २३—छटा=शोभा । घाटी=पहाड़ का मार्ग । सँकरा= (संकीर्ण) रास्ता । अठलाना=ऐंठ दिखाना, इतराना । नागिन=साँपिन, टेढ़ी मेढ़ी जाने वाली । अस्फाल्ट= तारकोल । वाटरफ़ाल=झरने । सेत (श्वेत)=सफेद । ताल=ताड़ वृक्ष । घोर निनाद=भयानक शब्द । कलरव=सुन्दर स्वर । सप्तम=सात स्वर यथा षडज, गान्धार, ऋषभ, निषाद, मध्यम, धैवत और पञ्चम । साँचे में ढली=सर्वाङ्ग सुन्दर और सुडौल । तिलतिला= कठिनता से थोड़ा थोड़ा । दर्रा=पहाड़ों के बीच का मार्ग । लेफ़्टनेंट सुशील कुमार इस समय लखनऊ युनिवर्सिटी में प्रोफ़ेसर हैं, उस समय वे भी यात्रा करते हुए मार्ग में मिल गए थे । बला=आफ़त । हलुआ =भोज्य पदार्थ, (आशय) सरल, आसान । आग़ाज= आरम्भ । आज़ादों=स्वतन्त्रों । बेकार=व्यर्थ । ग़म= दुख । अंजाम=परिणाम में, आख़िर में । ज़ोरो ज़फ़ा,

ज़ुल्मो सितम=अत्याचार, जबर्दस्ती। वल्लाह=ख़ुदा की कसम, ईश्वर की सौगन्ध। ख़्याले ख़ाम=कच्चा विचार। रग रग चूर होना=बहुत श्रमित हो जाना, थक जाना, मिहनत से शरीर दर्द करने लगना। डैन्यूब—नदी का नाम।

पाठ २४—शासक=शासन करने वाले, राजा। भोजपत्र (भूर्जपत्र) =एक पेड़ की छाल। क्षार—खार, सज्जी, नोना आदि। स्वावलम्बन (स्व+अवलम्बन)=अपना सहारा लेना, अपने पर निर्भय रहना। पेपर=काग़ज़। स्थायी=अधिक दिन तक रहने वाला। इजारा= अधिकार, स्वत्व।

" २५=भूतल भूषण=पृथ्वी का गहना, पृथ्वी की शोभा बढ़ाने वाला। पूषण=सूर्य्य। सुधाकर (सुधा+आकर)= अमृत का घर, चन्द्रमा। सुषमा=सुन्दरता। सस्य— अनाज। मलयाचल (मलय=चन्दन+अचल=पहाड़) वह पर्वत जिस पर चन्दन-वृक्ष होते हैं। चिरायु (चिर —बड़ी+आयु=उम्र)=बड़ी उम्र वाले। रवि-जन्हु- सुता=सूर्य और जन्हु की लड़की, यमुना और गंगा। रुज-रिष्ट=बीमारियों के उपद्रव। सौख्य=सुख। क्षमता =शक्ति। निसर्ग=प्रकृति। पद्म=कमल। वरदा=वर देने वाली, सरस्वती। उशीर=खस, सुगन्धित तृण।

" २६—सहयोग=सहायता।

" २७—तम—अन्धकार। तोम=समूह। तरु=पेड़। निशाचर =राक्षस। विभावरी=रात। द्विरद (द्वि+रद)=दो दाँत वाले अर्थात् हाथी। गहन=जंगल, वन। शत= सौ। कोटि=करोड़।

पाठ २८—आकर्षण शक्ति=अपनी ओर खींचने की ताक़त। कारगर=उपयोगी। गटापरचा=एक प्रकार का गोंद। गार्डर=रेल की लोहे की पटरी।

,, २९—घन=बादल। घटा=समूह, भीड़। अभिनय=नाट्य क्रिया, नाटक का खेल। अभिनीत=सर्वोत्कृष्ट, उपयुक्त। इन्द्रजाल=जादू का खेल। दृश्य=नज़ारा। प्रगल्भ=साहसी, उत्साही, अभिमानी। कायर=डरपोक। उद्वेलित=कंपित, कम्पायमान।

,, ३०—शिवि, राजा उशीनर के पुत्र थे। इन्द्र और अग्नि इनकी परीक्षा लेने के लिए कबूतर और बाज का रूप धर कर आये, कबूतर राजा की गोद में आ गिरा। राजा ने बाज से कहा कि कबूतर हमारी शरण में आ गया है इसलिये हम तुमको भोजन के लिये दूसरा मांस देंगे, किन्तु बाज ने यह कहा कि हमारा शिकार है, हम इसी को भक्षण करेंगे। बहुत कहने सुनने पर इस बात पर बाज राज़ी हुआ कि यदि आप अपने शरीर का मांस इस कबूतर के वजन के बराबर तौल कर दे दें तो मैं इसे छोड़ सकता हूँ राजा ने ऐसा ही किया। अपना मांस काट काट कर तराजू में चढ़ाने लगा; किन्तु वह कबूतर के बराबर तौल में न हुआ। जब राजा की अन्तिम अवस्था आई हुई देखी तब इन्द्र ने प्रकट होकर राजा की प्रशंसा की, और उनका शरीर आरोग्य कर दिया। कहा कि महाराज तुम धन्य हो, हमने तुम्हारी परीक्षा ली थी उसमें तुम पूर्ण उतरे। आतंक=भय। तिरस्कार=अपमान।

पाठ ३१—वारीश=समुद्र। बंक=टेढ़ी, चंचल। "चित्तखाते" =हार जाते। सारिका=मैना। पान्थ=यात्री। भूधर =पहाड़। रम्य=सुन्दर। सत्ता=मौजूदगी, उपस्थिति। मर्म=भेद। विश्व=संसार।

,, ३३—मसि=स्याही। मुए=मरने पर। भवितव्यता=होनहार। परिहरु=छोड़ दे। पाहन=पत्थर। चंग=पतंग। काया=शरीर। मनसा=इच्छा। उदय अस्त लों राज =चक्रवर्ती साम्राज्य, बहुत बड़ा राज्य जैसा बृटिश सर्कार का है। अवलम्बन=सहारा। छत्तीस=प्रतिकूल ३६ के अंक में ३ और ६ के मुख प्रतिकूल रहते हैं और ६३ में अनुकूल। नौ के पहाड़े को लिख कर देखो ९ दूनी १८ से लेकर ९ नवाँ ८१ तक दोनों अंक जोड़ने से ९ ही आवेंगे। उपचार=उपाय। मराल=हंस। मानस =मान सरोवर।

,, ३४—मुर्दनी सी छा गई थी=बहुत घबड़ा गया था, चेहरा उतर गया था। विस्मित=चकित, ताज्जुब में। वाद्य= बाजे। झूमने लगा=मस्ती दिखाने लगा। आलाप= बातचीत। त्वरित=शीघ्र, जल्दी। स्तब्ध=चुप, शान्त। आश्वासन=धीरज।

,, ३५—अधम=नीच। अभिराम=सुन्दर। तीन लोक=पृथ्वी, आकाश और पाताल। लच्छन=(लक्षण)। पेखो= देखो। सिर पै...नगारे=जब मृत्यु आ जाती है। सुठि =उत्तम, सुन्दर। सुख्याति=सुन्दर यश।

,, ३६—व्यापक—विस्तृत, सब जगह फैला हुआ। अस्थि=हड्डी। आहार=भोजन। अप्रयोजकता=अनावश्यकता, ग़ैर ज़रूरी। खगोल विद्या=आकाशमंडल के ग्रह आदि की

गति का ज्ञान कराने वाली विद्या। भूस्तरशास्त्र=पृथ्वी के नीचे का हाल जताने वाली विद्या। पाश्चात्य=पश्चिमी देश योरप आदि। मनःसामर्थ्य=मन की ताकत। आह्लाद=आनन्द। रक्ताभिसरण=खून का चलना, रक्त संचालन। ताड़ लिया=भाँप लिया, मालूम कर लिया।

पाठ ३७—मरि चुके=मर गये, मृतवत् हो गये। फेर=परिवर्तन, यहाँ ख़राब समय से तात्पर्य है। वामन अवतार=भक्त शिरोमणि प्रह्लाद के नाती राजा बलि दैत्य वंश में बड़े नामी राजा हो गये हैं। भृगु वंशी ऋषियों की कृपा से दिव्य बल प्राप्त कर उन्होंने इन्द्र की अमरावती पर चढ़ाई कर दी। इन्द्रपुरी जीत कर बलि ने एक बृहत् अश्वमेध यज्ञ किया। इधर बलि के हाथ से स्वर्ग का राज्य निकालने के उद्देश्य से भगवान् को अदिति के गर्भ से वामन रूप में अवतार लेना पड़ा। वामन महाराज भी बलि के यज्ञ में गये और उससे ३ पग (कदम) पृथ्वी माँगी जिसको देना उसने अपने गुरु शुक्राचार्य के मना करने पर भी स्वीकार किया। नापने के समय भगवान ने अपना रूप इतना बढ़ाया कि तीनों लोक नाप जाने पर भी तीन पग पूरे न हुए। इसलिए राजा बलि ने शेष में अपना शरीर अर्पण कर दिया। इस पर प्रसन्न होकर भगवान ने बलि को सुतल लोक में वास करने की आज्ञा दी और नित्य दर्शन देने का वचन भी दिया। रहिला=चना।

,, ३८—रमणीयता=सुन्दरता। धूल-धूसरित=धूल से मैला। उपयोग=काम में लाना। विलासिता=सुख भोग,

खेल तमाशा आदि। सर्चलाइट=वह प्रकाश जिसके द्वारा ठीक स्थिति का पता लगाया जा सके।

पाठ ३९—सतानन्द=महाराज जनक के कुल पुरोहित थे। भाजन =पात्र। यश भाजन=यश पाने के योग्य। वृन्द= समूह। जरठ=वृद्ध, बूढ़े। विशद=विशाल, बड़ा। महिपाल=राजा। भव=शिव। अवगाह=कठिन। दुन्दुभी=नगाड़ा। प्रसून=फूल। पानि (पाणि)= हाथ। निमेषी=पलकों का मारना। बन्दीजन=भाट, यश वर्णन करने वाले। विरदावली=यश समूह। विशाल =ऊँचा, बड़ा। विधु=चन्द्रमा। राहु=आठवाँ ग्रह, केतु का सिर, कहते हैं यही सूर्य्य और चन्द्रमा को ग्रस लेता है तब ग्रहण होता है। पुरारि (त्रिपुरारि) त्रिपुर+अरि=त्रिपुरासुर के शत्रु, शिव। कोदण्ड= धनुष। भट=योद्धा। माषे=क्रोधित हुए। परिकर= कमरबन्द, कमर में बाँधने का फेंटा, दुपट्टा। दीप= द्वीप। विपुल=बहुत। कमनीय=सुन्दर। सुकृत= सत्कर्म, पुण्य। रद=दाँत।

„ ४०—विद्यमान=मौजूद। पंकज=कमल। राउर=आपका। अनुशासन=आज्ञा। कन्दुक=गेंद। इव=तरह। ब्रह्माण्ड=सारा संसार। मूलक=मूली। बापुरो= बेचारा। पिनाक=धनुष। दिग्गज=लोकपाल, दिशाओं के हाथी। ठवनि=चाल, खड़े होने की विशेष रीति। मराल=हंस। मंदर=पर्वत, मन्दराचल। सयानप= चतुराई। तम=अन्धकार। खर्व=छोटा। छोभा (छोभा) —दुःखी। दारुण=कठिन। कुलिशहु—वज्र से भी। हरुअ=हलका। लव=क्षण। लवनिमेष=थोड़ा समय।

लोल=चंचल। मनसिज=कामदेव। मीन=मछली। विधुमण्डल=चन्द्रमण्डल। गिरा=वाणी। अलिनि=भौंरी। कृपन (कृपण)=कंजूस। व्याल=सांप। विहात=बीतता है। तड़ाग=तालाब।

पाठ ४१—अवयव=भाग। अघुलन=न घुलने वाली। द्रव्य=वस्तु, चीज़।

,, ४२—कानन=वन। कान्त=पति, स्वामी। कल्पना=रचना करना, मन के द्वारा अद्भुत भावों और विचारों का आविष्कार करना। उपमा=अर्थालङ्कार जिसमें दो वस्तुओं में भेद रहते भी उनकी समानता दिखलाई जाती है। आकर=खान, समूह। निगमागम (निगम+आगम)=वेद, शास्त्र। चिरकाल=बहुत समय तक। देववाणी=संस्कृत। हृदय के नेत्र=ज्ञानचक्षु। रङ्क=दरिद्र। कलाधर=चन्द्र।

,, ४३—शेषांश=बाकी भाग। विभूषित=शोभित। मरीचिमाली=किरण माला वाले, सूर्य। उत्ताप=गर्मी। सुसज्जित=सजी हुई। शिखर=चोटी। आरूढ़=चढ़ा हुआ। सलिल सीकर=जलबिन्दु। पानोत्तर=पीने के बाद। प्रसूनस्तवक=फूलों का गुच्छा। त्राहि त्राहि=रक्षा करो, रक्षा करो। अश्रुपात=आँसू गिराना। यत्र तत्र=जहाँ तहाँ।

,, ४४—अचल=पहाड़। निपट=बिलकुल। अबुध (अ+बुध)=ज्ञान रहित। भेक=मेंढक। अमल (अ+मल)=साफ, शुद्ध। जलज=कमल। स्रवन (श्रवण)=कान। भेव=भेद। निबन्ध=बन्धेज, सद्वृत्ति। सरवर=तालाब।

परिशिष्ट (२)

कवि-परिचय

गोस्वामी तुलसीदास

हिन्दी-साहित्य-सम्राट् गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म
जापुर ज़िला बाँदा में सं० १५८९ में हुआ था। कोई कोई विद्वान्
का जन्म १५५४ संवत् में भी मानते हैं। इनकी मृत्यु का संवत्
६८० सर्वमान्य है। गोस्वामी जी राम के अनन्य भक्त थे। इनके
मचरित-मानस का मान योरुप तक के बुद्धिमानों ने किया है।
ारत में तो इनकी रामायण घर घर में विराजमान है। इनके
मच्चरित को पढ़ कर अनेक लागों ने विमल ज्ञान प्राप्त किया है।
के रामचरित-मानस ने इनको सदा के लिये अमर कर दिया
। इन्होंने और भी १४ ग्रन्थों का निर्माण किया है।

रहीम

'रहीम' का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खाँ ख़ानखानाँ था। यह
अकबर के संरक्षक बैरम खाँ ख़ानखानाँ के पुत्र थे। अकबर के
क मन्त्री थे। हिन्दी के यह बहुत अच्छे कवि थे और हिन्दी
वियों का बड़ा आदर करते थे। यह तुलसीदास जी के
समकालीन थे। इनके दोहे बहुत प्रसिद्ध हैं।

पं० बालकृष्ण भट्ट

भट्ट जी हिन्दी के अच्छे लेखक थे। आपका जन्म प्रयाग में
सं० १९०१ में हुआ था। आप संस्कृत, हिन्दी के विद्वान थे।
अंग्रेजी में इन्होंने इन्ट्रेंस तक शिक्षा प्राप्त की थी। हिन्दी-प्रदीप

नाम का मासिक पत्र भी यह बहुत दिन तक निकालते रहे। प्रदं का उस समय हिन्दी संसार में बड़ा मान था। इन्होंने कई पुस्त· लिखीं जिनमें 'सौ अजान एक सुजान' और नूतन ब्रह्मचारी बहुत उत्तम हैं। १९७१ में आपका देहान्त हुआ।

पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी

द्विवेदी जी की गणना हिन्दी के उच्च कोटि के लेखकों में हैं अनेक हिन्दी-भक्त इनको आचार्य की पदवी से विभूषित करते हैं इनकी लेखन-शैली में एक खास आकर्षक और अद्‌भुत शक्ति पाई जाती है। इनका जन्म दौलतपुर ज़िला रायबरेली में संवत १९२१ वि० में हुआ था। इन्होंने वर्षों प्रयाग की प्रसिद्ध सरस्वती मासिक पत्रिका का सम्पादन किया है। इन्होंने स्वाधीनता, सम्पत्ति शास्त्र, महाभारत और रघुवंश आदि अनेक पुस्तकें अनुवादित रूप में लिखी हैं। अब वृद्धावस्था में भी यथाशक्ति हिन्दी सेवा में लगे हैं।

Printed by RAMZAN ALI SHAH at the National Press, Allahabad.